चन्दामामा
नवम्बर १९७५

Photo by: M. NATARAJAN
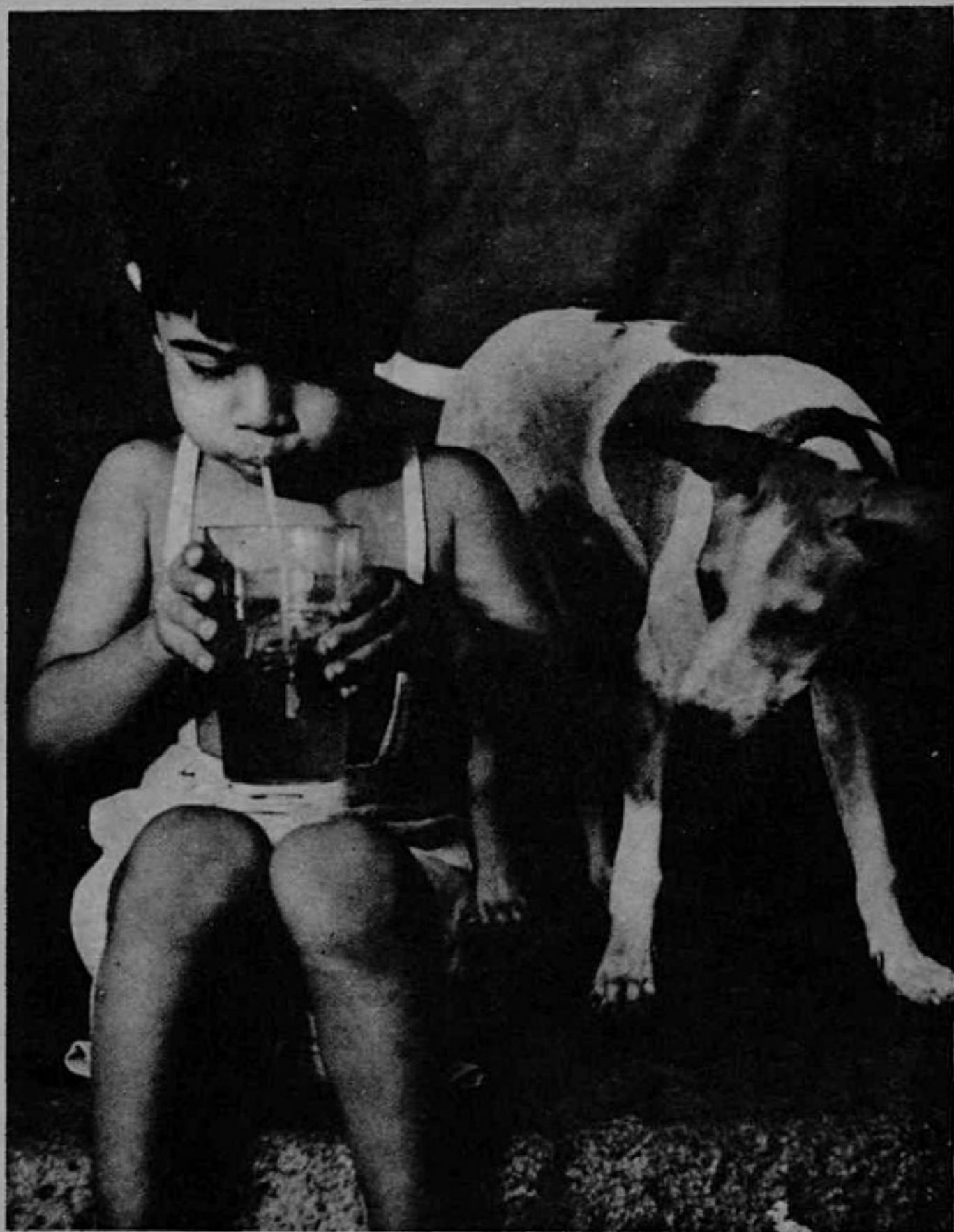
COOL DRINK

५ फलों के स्वाद
रासबेरी, नींबू, नारंगी,
अनानास व मोसंबी.

रसीली • प्यारी
मज़ेदार

फलों के स्वादवाली गोलियां

everest/917/PP-hn
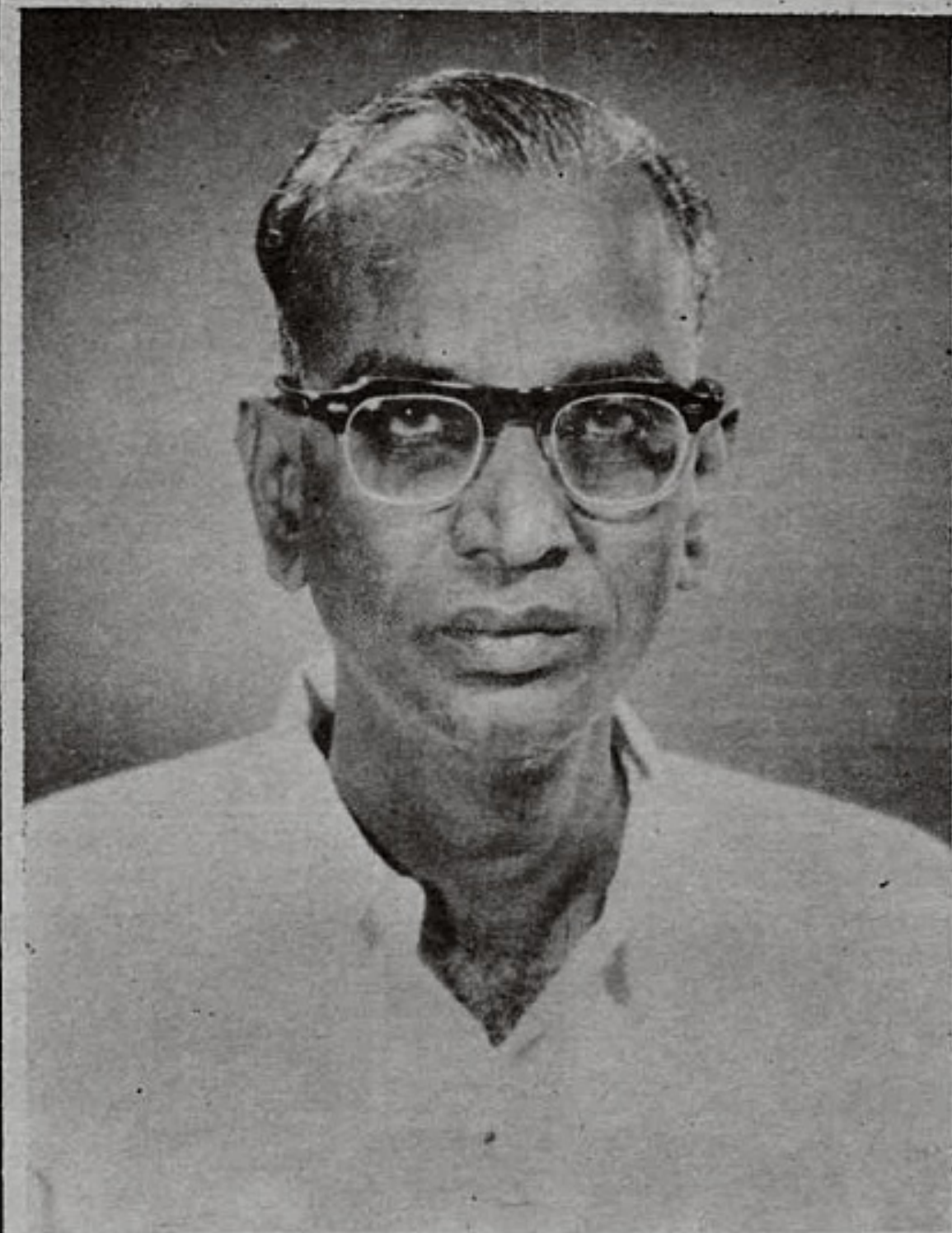
जन्म

५-८-१९०८

निधन

२४-९-१९७५

चन्दामामा के संचालक श्री चक्रपाणी का आकस्मिक निधन २४ सितंबर को हुआ। यह समाचार हम चन्दामामा के पाठकों को अत्यंत संताप के साथ सूचित करते हैं।

चन्दामामा श्री चक्रपाणी की मानस-पुत्री है।

अनेक दशाब्दों से उन्होंने इसके प्रकाशन के सपने देखे। श्री नागिरेड्डी के संपर्क में आने पर इस पत्रिका को वास्तविक रूप प्राप्त हुआ। जुलाई १९४७ में याने भारत की स्वतंत्रता की प्राप्ति के डेढ़ मास पूर्व–चन्दामामा दो भाषाओं में (तेलुगु, तमिल) अवतरित हुई। इसके बाद अन्य भाषाओं में भी इसका विस्तार हुआ। आज यह पत्रिका जिस रूप में उन्नति के शिखर पर पहुँच गई है, उसका संपूर्ण श्रेय श्री चक्रपाणी को प्राप्त है। चन्दामामा के प्रति उनकी लगन व तपस्या ही इसके विकास की सीढ़ियाँ हैं।

श्री चक्रपाणी का व्यक्तित्व बहुमुखी है। चन्दामामा के संचालन के साथ फ़िल्मी क्षेत्र में भी श्री नागिरेड्डी व चक्रपाणी का द्वय नर-नारायण के सदृश्य हैं। इसके पूर्व श्री चक्रपाणी ने आन्ध्रज्योति, संचारी, किनिमा, युवा इत्यादि तेलुगु मासिक पत्रिकाओं, विशेषकर युवा, युवा प्रेस एवं प्रॉसेसों का भी संचालन किया है। अनेक कार्यक्रमों में व्यस्त रहते हुए भी वे चन्दामामा की अभ्युन्नति के लिए विशेष श्रम करते रहे हैं।

श्री चक्रपाणी ने वैसे कोई ऊँची शिक्षा प्राप्त नहीं की, फिर भी स्वावलंबन के द्वारा अंग्रेज़ी, हिन्दी, बंगाला तथा संस्कृत भाषाओं में अच्छा पांडित्य प्राप्त किया। १९५० में वे फ़िल्मी क्षेत्र में आये, तब तक उन्होंने अनेक प्रमुख बंगाली कृतियों का तेलुगु में रूपांतर किया था। तेलुगु भाषियों को शरत की रचनाओं का परिचय कराने का श्रेय आप ही को प्राप्त है। इसके पूर्व एक-दो व्यक्तियों ने बंगाली साहित्य का तेलुगु में रूपांतर किया था, किंतु श्री चक्रपाणी के अनुवादों के द्वारा ही शरत की रचनाओं ने आन्ध्रवासियों पर अपना अमिट प्रभाव डाल दिया।

श्री चक्रपाणी का जन्म ५ अगस्त १९०८ में तेनाली के ऐतानगरप्पाडु में एक साधारण कृषक परिवार में हुआ था। उनका वास्तविक नाम आलूरि वेंकट सुब्बाराव है। चक्रपाणी उनका उपनाम है। यौवनावस्था में ही वे तपेदिक के शिकार हुए। चिकित्सा के हेतु वे मदनपल्ली के शानिटोरियम में भर्ती हुए। वहीं पर एक बंगाली बाबू के साथ उनका परिचय हुआ। उन्हीं की प्रेरणा से श्री चक्रपाणी ने बंगला सीखी।

राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रेरित होकर

आपने हिन्दी सीखी। न केवल वे अनेक हिन्दी परीक्षाओं में उत्तीर्ण हुए, अपितु अनेक व्यक्तियों को हिन्दी पढ़ाई और उन्हें विद्वान भी बनाये। श्री चक्रपाणी की सब से बड़ी विशेषता यह है कि वे जो भी कार्य हाथ में लेते हैं, उसे समग्र रूप देकर ही छोड़ते हैं। उनकी बंगाली कृतियों के अनुवाद पढ़ कर एक सज्जन ने उनसे पूछा था–"आप कलकत्ते में कितने वर्ष रहे हैं?" चक्रपाणी ने बड़े ही निश्चल भाव से उन्हें उत्तर दिया था–"मैं यह भी नहीं जानता कि बंगाल प्रांत कैसा होता है?" यह उत्तर सुन कर वह व्यक्ति एकदम चकित रह गया था।

श्री चक्रपाणी की कतिपय मौलिक कृतियाँ भी तेलुगु पुस्तक रूप में प्रकाशित हैं। उनका सुनिशित हास्य एवं व्यंग्य उन कृतियों में देखा जा सकता है। वही हास्य उनके द्वारा प्रस्तुत फ़िल्मों में देखने को मिलता है। "पेल्लि चेसि चूडु", "मिस्सम्मा", अप्पुचेसि पप्पुकूडु" विशेष कर "गुंडम्म कथा" इत्यादि फ़िल्म उनके हास्य-व्यंग्य के उत्तम उदाहरण हैं।

विजया प्रोडक्शन्स के बैनर पर अंकित "क्रियासिद्धि स्सत्वे भवति" श्री चक्रपाणी की देन है। उनका यह दृढ़ विश्वास था कि सफलता केवल व्यक्ति की शक्ति पर ही आधारित होती है। पुस्तक-प्रकाशन, फिल्म-निर्माण, पत्रिका-संचालन इत्यादि जिस किसी भी कार्यक्रम का उन्होंने अपने मन में संकल्प किया, उनमें अधिकतर वे व्यक्ति की शक्ति पर ही निर्भर रहे।

पांच-पांच हज़ार प्रतियों के साथ दो भाषाओं में प्रारंभ की गई चन्दामामा आज ११ भाषाओं में साढ़े पांच लाख प्रतियों का प्रचार पा चुकी है, तो इसके पीछे व्यक्ति के 'सत्व' को छोड़ उल्लेखनीय वस्तु दूसरी कोई नहीं है। चन्दामामा के विकास की योजना समाप्त होने के पूर्व ही श्री चक्रपाणी का निधन का होना हमारे लिए अत्यंत दुर्भाग्य की बात है; परंतु गत २८ वर्षों से चक्रपाणी ने चन्दामामा की जो ज़बर्दस्त नींव डाली है, वह अत्यंत सुदृढ़ है। इस कारण से चन्दामामा की योजना आगे बढ़ती जाएगी। चन्दामामा को 'चिरंजीवी' बनाने के हेतु उन्होंने रात-दिन कार्य किया, अतः चन्दामामा चिरंजीवी है, श्री चक्रपाणी अमरजीवी हैं।

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

चन्दामामा पत्रिका के आधार-स्तम्भ श्री चक्रपाणी के आकस्मिक निधन का समाचार देते हुए हार्दिक दुख हो रहा है। उनके निधन तक चन्दामामा का अक्तूबर अंक प्रकाशित हो चुका था। इस कारण इस महीने की चन्दामामा में हम उनके प्रति अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे है। असंख्य पाठकों ने श्री चक्रपाणी के निधन का समाचार मालूम होते ही अपनी समवेदना प्रकट करते पत्र लिखे। उन सबके प्रति हम अपने हृदयपूर्वक धन्यवाद समर्पित कर रहे हैं।

वर्ष : २८ नवम्बर १९७५ अंक : ५

मित्र-भेद

[२८]

दुष्टबुद्धि को उसके पिता ने केकड़े की कहानी सुना कर कहा–"विवेकशील व्यक्ति यदि कोई योजना बनाता है तो उसे उस के गुण-दोषों पर भी सावधानी से विचार करना चाहिए। तुम्हारी योजना में मुझे कई त्रुटियाँ दिखाई देती हैं।"

इस पर दुष्टबुद्धि ने अपने पिता से कहा–"नहीं पिताजी! यह एक अच्छी योजना है; प्रत्येक योजना में कोई न कोई त्रुटि अवश्य होगी। तुम मेरे कहे अनुसार न करोगे तो वृक्ष देवता गवाह न देगा। झूठ बोलने के अपराध में न्यायाधिगारी मेरा सर कटवा देंगे। इसलिए तुम्हें मेरी योजना को सफल बनाने में हाथ बंटाना होगा। इससे हम सुखपूर्वक अपने दिन बिता सकते हैं।"

आखिर दुष्टबुद्धि ने अपने पिता को मनवाया। उसी रात को अपने पिता को जंगल में ले जाकर एक पेड़ के खोखले में इस तरह छिपाया जिससे कोई देख न सके।

दूसरे दिन सवेरे दुष्टबुद्धि नहा-धोकर जंगल के उस वृक्ष के पास पहुँचा। वहाँ पर न्यायाधिकारी तथा धर्मबुद्धि भी आ पहुँचे। दुष्टबुद्धि ने उच्च स्वर में कहा–"हे वृक्ष देवता, मनुष्य जो भी कार्य करते हैं, उसे सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, पंच भूत, अंतरात्मा तथा वृक्ष देवता भी जानतें हैं। इसलिए तुम बताओ, हम दोनों में चोर कौन हैं–धर्मबुद्धि या मैं?"

दुष्टबुद्धि का पिता पेड़ के खोखले में से चिल्ला उठा–"सोने का अपहरण करने वाला व्यक्ति धर्मबुद्धि है।"

अंतिम पृष्ठ का चित्र

यह बात सुनकर धर्मबुद्धि ने अपने मन में सोचा—"वृक्ष देवता का गवाह देना कैसा? देवता तो सच बोलते हैं। इसमें कोई दगा है। दुष्टबुद्धि ने पेड़ के खोखले में किसी को छिपा रखा होगा। मैं इस कपट देवता को अच्छा सबक़ सिखाता हूँ; परंतु मुझे बड़ी सावधानी बरतनी होगी। क्योंकि न्यायाधिकारी मूर्ख हैं। अलावा इसके उनके मन में यह विश्वास जम गया कि मैं ही दोषी हूँ।"

यों सोच कर उसने न्यायाधिकारियों से कहा—"महाशयो, वृक्ष देवता का सत्य जानना और उसे प्रकट करना सचमुच अद्भुत समाचार है। मेरा नाम तो धर्मबुद्धि ही है। वास्तव में मुझे धन की जरूरत नहीं है, फिर भी उस पल में मानसिक दुर्बलता का शिकार हो मैंने अकेले ही आकार सारा सोना ले लिया है। मेरे धन लेते वक़्त एक भयंकर सर्प यहाँ आ धमका। उस वक़्त मुझे ऐसा लगा कि यह शकुन अच्छा नहीं है। खोया हुआ धन पुनः मिल सकता है, पर प्राण लौट कर नहीं आता। सांप के चले जाने के बाद पुनः आकर धन ले जा सकता हूँ; यों सोच कर मैंने सारा सोना पेड़ के खोखले में छिपा दिया। उसकी रक्षा के हेतु सांप भी खोखले में घुस पड़ा। मैं आप लोगों को सोना सौंप दूंगा। किसी भी उपाय से सही उस सांप को मार कर मैं सोना बाहर निकालूंगा। यदि आप लोग

थोड़ा हट जाय तो मैं खोखले में धुआँ करता हूँ।"

धर्मबुद्धि को ऐसा ही करने की स्वीकृति न्यायाधिकारियों ने दी।

इसके बाद धर्मबुद्धि ने पेड़ के खोखले में सूखी लकड़ियाँ तथा सूखे पत्ते डालकर आग लगा दी। दुष्टबुद्धि का चेहरा पील पड़ गया। वह सर झुकाये यह सोचने लगा कि खोखले में स्थित उसके पिता पर न मालूम क्या बीतेगा? सचाई प्रकट हो जाने पर उसकी क्या गत होगी।

जल्दी ही लपटें खोखले में फैल गईं। सारा खोखला धुएँ से भर उठा। थोड़ी ही देर में दुष्टबुद्धि के पिता का आधा शरीर झुलस गया। उसकी आँखें जाती रहीं, वह आर्तनाद करते खोखले से बाहर लुढ़क पड़ा।

न्यायाधिकारियों ने उससे पूछा—"यह सब क्या है?"

"मेरे पुत्र दुष्टबुद्धि का कुतंत्र है यह!" इन शब्दों के साथ उसने सारा वृत्तांत सुनाकर अपने प्राण त्याग दिये। न्यायाधिकारियों ने दुष्टबुद्धि को उसी पेड़ की एक डाल पर फांसी पर लटकवा दिया और धर्मबुद्धि की युक्ति की बड़ी तारीफ़ की।

करटक ने दमनक को दुष्टबुद्धि की कहानी सुनाकर समझाया—"मूर्ख! तुमने अदूरदर्शिता के कारण यह काम करके न केवल अपनी हानि की, बल्कि मेरे साथ हमारे परिवार के लिए विपत्ति पैदा की है। मूर्खों के काम ही कुछ ऐसे होते हैं। नदियाँ खारे जल से भरे समुद्र में गिर जाती हैं। झगड़नेवाली औरतें परिवार के बंटवारे का कारण बन जाती हैं, इसी प्रकार तुमने अपने नीच स्वभाव से पिंगलक तथा संजीवक के बीच वैमनस्य बढ़ाया है। तुम ऐसे वज्र मूर्ख हो कि चूहों के लोहे खाने की कहानी पर ही विश्वास किया जा सकता है!"

"वह कैसी कहानी है?" दमनक ने पूछा। करटक ने यों सुनाया:

विचित्र जुड़वाँ
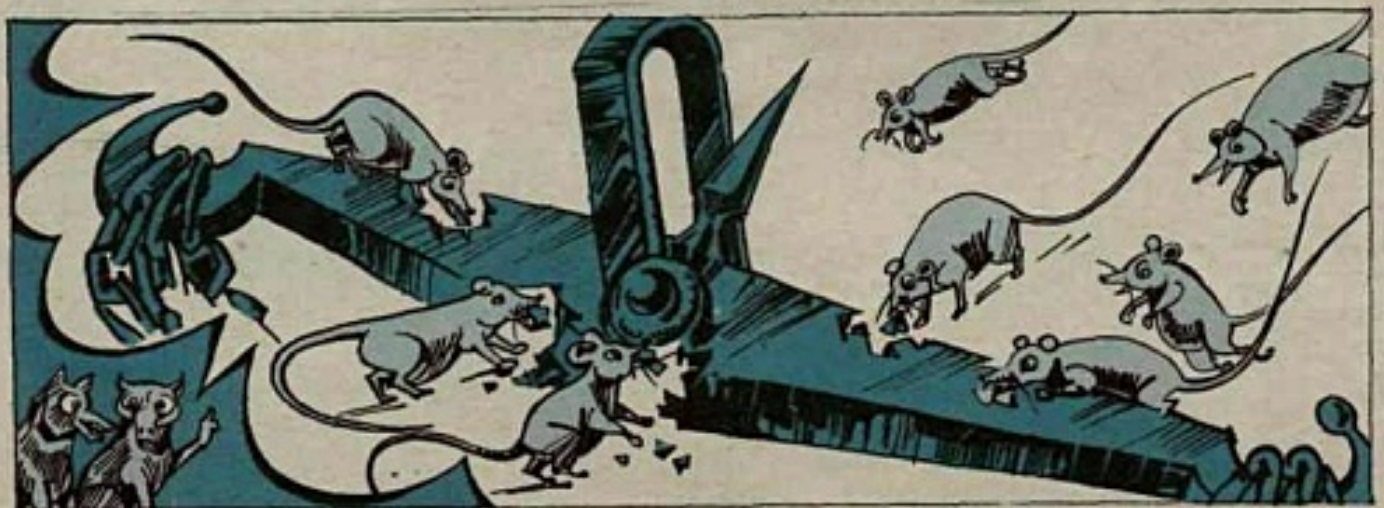
[१६]

[राक्षस ने तीनों राजकुमारियों को गूंगा बनाकर जंगल में छोड़ दिया। मालव देश का राजा उन्हें असहाय देख अपने राज्य में ले गया। उधर उदयन अपना वेश बदलकर राक्षस के सेवकों में मिल गया। एक दिन आधी रात के वक़्त राक्षस वहाँ गया और उसने पूछा कि उसके सिंहों को किसने मार डाला है? इसके बाद...]

राक्षस गरजते हुए जब उदयन के निकट पहुँचा तब वह डर के मारे कांप उठा। वह कोई जवाब देने ही वाला था, तभी राक्षस के परिचारक दौड़े-दौड़े वहाँ पर आ पहुँचे।

सिंह को मारने वाला परिचारक हाथ बांधे विनय पूर्ण स्वर में बोला— "मालिक! मैंने ही इन सिंहों को मार डाला। हमारे महल में रहते, हमारा खाना खाते, ये हम्हीं को मारने दौड़े, अगर मैं वक़्त पर तलवार न चलाता, तो बेचारा यह अपनी जान खो बैठता!"

इस पर राक्षस ने शांत हो कर कहा— "ओह, ऐसी बात है! तुमने बड़ा अच्छा किया! लगता है कि बैठे-बैठे खूब खा-पीकर इन्हें चर्बी चढ़ गई है! बाक़ी सिंहों को भी एक हफ़्ते तक भूखा रखो, तब जाकर ये हमारी बात मान लेंगे!"
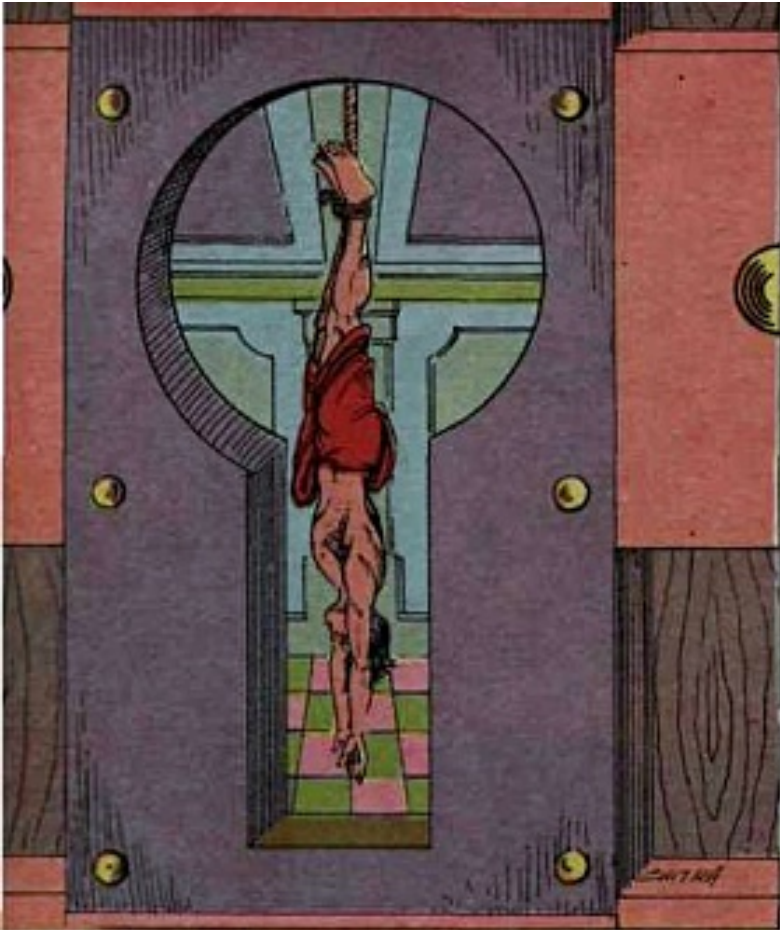
यों कह कर राक्षस शीघ्रता से चला गया। तब जाकर उदयन की जान में जान आ गई, वैसे वह चुपचाप लेटा हुआ था, पर वह राक्षस की गति-विधियों पर नज़र रखे हुए था।

इसके बाद राक्षस आंगन के छोर पर स्थित एक बड़े दर्वाजे तक पहुँचा, अपनी कमर में से कोई छोटी सी चाभी निकाली, कोई मंत्र पढ़ा, जिस से वह चाभी सात फुट लंबी हो गई। उस चाभी से राक्षस ने किवाड़ खोल दिया और भीतर प्रवेश किया।

उदयन ने सोचा कि जाकर देखे कि उस कमरे के भीतर क्या है। लेकिन यदि वह पकडा जाएगा तो उसके प्राणों की खैर नहीं है। इसलिए वह सावधानी से देखते हुए वैसे ही लेटा रहा।

थोड़ी देर बाद राक्षस बाहर आया, फिर से किवाड़ बंद किये। पुनःमंत्र का उच्चारण किया जिससे चाभी छोटी हो गई। चाभी को कमर में खोंसकर पाताल गृह से चला गया।

राक्षस के परिचारक अपनी अपनी जगह गये और खुर्राटे लेते हुए सोने लगे। मौक़ा पाकर उदयन धीरे से उठा, उस दर्वाजे के निकट पहुँचा जिसे खोल कर राक्षस ने बंद किया था। उदयन ने चाभी रखनेवाले छेद में से भीतर देखा तो वह अपनी आँखों पर यक़ीन नहीं कर पाया। क्यों कि वह जिस दाढ़ी वाले की खोज में था, वह औंधे मुँह लटक रहा है, पर संध्या कुमार तथा निशीथ का कहीं पता नहीं है।

उस दृश्य को देखते ही उदयन भय और संभ्रम से भर उठा। वह सोचने लगा, उसके भाइयों का क्या हो गया है? शायद दाढ़ीवाले से मिलने पर उनका पता लग जाए। लेकिन बिना चाभी के कमरे के भीतर कैसे पहुँचे?

थोड़ी देर तक वह दर्वाजे के पास निश्चल खड़ा रहा, पर उसे कोई उपाय

न सूझा। आखिर ऊबकर वह अपनी जगह लौट आया और लेट गया। उदयन लेट तो गया, मगर नींद आवे, तब न? उस कमरे में वह कैसे पहुँचे? दाढ़ीवाले से कैसे मिले? उसके भाई कहाँ? रात भर उदयन ये ही बातें सोचता रहा।

सवेरा हुआ। रात को पहरा देने वाला दल पाताल गृह को लौट आया। उस दल के आते ही आराम करने वाला दल सरोवर के पास चला गया। उदयन के मन में यह विचार आया कि उन लोगों के द्वारा दाढ़ीवाले के कमरे में प्रवेश करने का उपाय जान ले। मगर दूसरे ही क्षण उसके मन में यह संदेह पैदा हुआ कि इस उपाय के पूछने पर संभवत: उस पर वे लोग शक करे और उसके बदले हुए वेश का पता लग जाय। शायद वह पकड़ा भी जाय! इसलिए वह मनमसोस कर रह गया।

एक हफ़्ते बाद राक्षस फिर लौट आया। पहले की भाँति कमर में से छोटी सी चाभी निकाली, मंत्र जापकर उसे बड़ी चाभी बना दी, किवाड़ खोल कर भीतर प्रवेश किया। उदयन भी युक्ति के साथ ड्योढ़ी पारकर कमरे के भीतर पहुँचा।

किवाड़ की बगल में आदम कद लंबे तीन बड़े कूंड़े थे जो ढक्कनों से ढके हुए थे। उदयन ने एक कूंड़े का ढक्कन उठाया, उसे लगा कि उसके भीतर कोई आदमी है। उसने झट से उसको ढक दिया। दूसरे कूंड़े का ढक्कन उठाकर देखा, उसमें भी कोई आदमी दिखाई दिया। उसे भी ढक दिया, तीसरा कूंड़ा खोलकर देखा तो खाली था। चुपचाप उसमें प्रवेश करके ढक्कन ढक दिया। उदयन यह काम जब कर रहा था तब राक्षस कहाँ गया था, उसे स्वयं पता न था।

थोड़ी देर बाद राक्षस कूंड़ों के निकट पहुँचा। 'एक'. चिल्लाते उसने पहले

कूंड़े का ढक्कन उठाया। भीतर का आदमी उठ खड़ा हुआ। राक्षस ने उसके केश पकड़कर बाहर निकाला, फिर 'दो' चिल्लाकर दूसरे कूंड़े का ढक्कन उठाया। उसके भीतर का आदमी भी उठ खड़ा हो गया। उसके भी केश पकड़कर बाहर खींच लिया।

इसके बाद राक्षस उन दोनों को साथ ले कमरे से बाहर आया। किवाड़ बंद करके चाभी कमर में खोंस दी। उन दोनों को अपनी दो मुट्ठियों में रखे पाताल गृह से बाहर निकल गया।
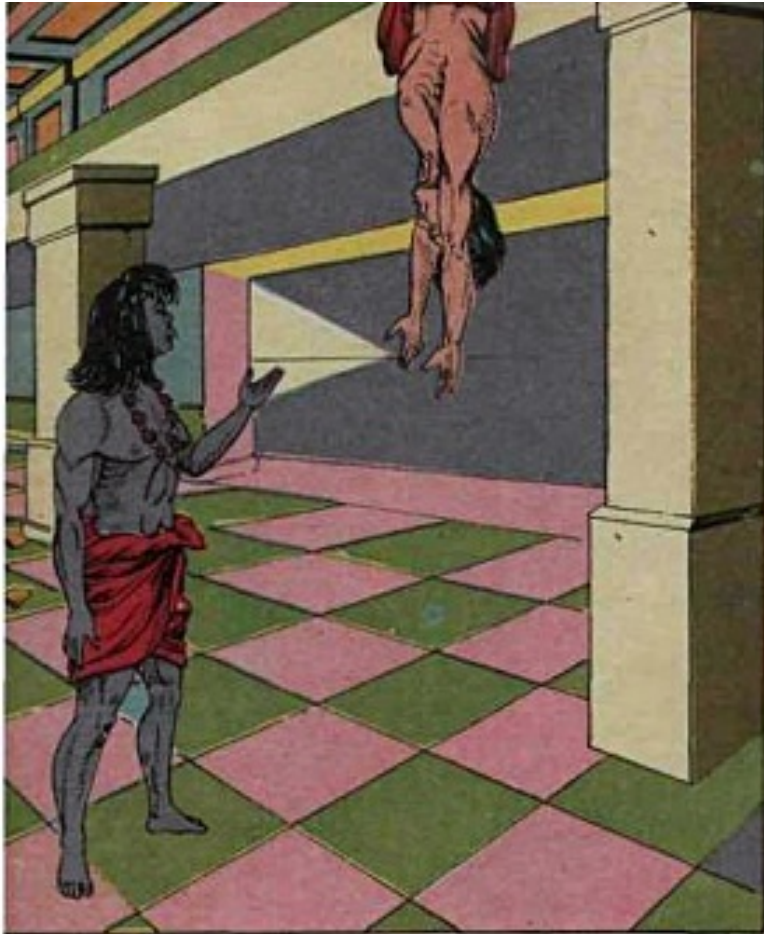
राक्षस के चले जाने पर उदयन कूंड़े का ढक्कन उठाकर बाहर निकलने को हुआ, मगर जैसे भीतर जाना सरल था, वैसे बाहर निकलना संभव न था। बाहर निकलने के ख्याल से एक छलांग मारा, पर वह कूंड़े के किनारे से ऊपर उछल न पाया। उसके पैर की ठोकर लगकर कूंड़े के साथ वह नीचे गिर पड़ा। कूंड़ा टुकड़े-टुकड़े हो गया।

इस प्रकार कूंड़े से निकलकर उदयन ने देखा कि थोड़ी दूर पर दाढ़ीवाला औंधे मुंह लटक रहा है। एक ही छलांग में उदयन दाढ़ीवाले के निकट पहुंचा और बोला–"भाई, तुम्हारे लिए यह कैसा दण्ड है? मेरे भाई क्या हो गये? जल्दी बताओ! राक्षस के आने के पहले मुझे यहाँ से भाग जाना होगा?"

दाढ़ीवाले ने भांप लिया कि उदयन अपना वेश बदलकर अन्दर चला आया है। तब बोला–"उदयन! घबराओ मत! राक्षस एक हफ़्ते तक यहाँ नहीं आएगा। पहले तुम मेरे बंधन खोल दो। तब मैं सारी बातें बताऊँगा।"

उदयन ने दाढ़ीवाले के बंधन खोल दिये। इस पर दाढ़ीवाले ने यों कहना शुरू किया–"उदयन! तुम्हारा भीतर प्रवेश करना, कूंड़ो के ढक्कन खोलकर देखना–यह सब मैं देख ही रहा था। दो कूंड़ों में तुमने जिन आदमियों को

देखा, वे ही तुम्हारे भाई हैं। अच्छा हुआ कि राक्षस ने तीसरे कूंड़े का ढक्कन नहीं उठाया। यदि उसका भी ढक्कन उठाता तो न मालूम तुम्हारी क्या गत होती?"

ये बातें सुन उदयन बड़ी आतुरता से बोला—"क्या कहा! वे दोनों मेरे भाई हैं? संध्याकुमार और निशीथ हैं? चलो, पहले हम उन्हें मुक्त करेंगे।" उदयन जल्दी मचाने लगा।

दाढ़ीवाला ठठाकर हंस पड़ा और बोला—"अरे बावरे! तुम समझते हो कि वे दोनों अब तक कूंड़ों में हैं? क्या तुम्हें राक्षस का 'एक' 'दो' पुकारना सुनाई नहीं दिया? वह उन दोनों को कूंड़ों से बाहर निकालकर अपने साथ कहीं ले गया है।"

"अच्छा, तब तो तुम पहले मुझे यह बताओ कि राक्षस ने तुम्हें इस तरह औंधे मुंह क्यों लटका दिया है? मेरे भाइयों को कूंड़ों में क्यों बन्दी बनाया है? उस दिन तुम लोगों को राक्षस पाताल गृह में ले आया, उसके बाद क्या क्या हुआ है?" उदयन ने एक साथ कई सवाल पूछे।

"कूंड़े के टूटे टुकड़ों को पहले हमें छिपाकर रखना होगा। बाद को मैं तुम्हें बाक़ी बातें सुनाऊँगा।" यों कहते दाढ़ीवाले ने उन टुकड़ों को उठाया, तब उदयन से कहा—"राक्षस ने हमें

धमकाया कि हम तुम्हारा पता बता दे। उसका विचार है कि हम तुम्हारा पता जानते हुए भी छिपा रहे हैं, जब तक तुम्हारा सही पता बताया नहीं जाएगा, तब तक वह हमें तंग करता रहेगा। लेकिन हमने उसे कोई भी बात नहीं बताई। इस पर उसने हम तीनों को तीन कूंड़ों में बंद किया। तब भी मैंने तुम्हारा रहस्य प्रकट नहीं किया। इस पर नाराज हो उसने मुझे इस तरह औंधे मुंह लटकवा दिया है। फिर भी मैं उसे यही बताता आ रहा हूं कि मैं तुम्हारे बारे में बिलकुल नहीं जानता। उसने यह भी धमकी दी कि मेरी ही भांति तुम्हारे भाइयों को उल्टे पैर लटकाया जाएगा। मगर ऐसा नहीं किया। मेरी समझ में नहीं आता कि वह तुम्हारे भाइयों को कहां ले गया है और किसलिए ले गया है।"

इसके बाद उदयन ने अपना समाचार सविस्तार बताया कि वह वेश बदलकर कैसे पाताल गृह में पहुंच गया है। उस संदर्भ में उसने यह भी बताया कि उसने अंजन व भस्म कैसे खो दिया है।

सारी बातें सुनकर दाढ़ीवाले ने समझाया–"तुम्हारे अंजन व भस्म निश्चय ही राजा ने हड़प लिया होगा। तुम किसी उपाय से यहां से बाहर निकल जाओ और राजा से उन्हें पुनः प्राप्त करने का उपाय सोच लो।"

फिर दोनों ने मिलकर अंजन व भस्म प्राप्त करनेवाले उपायों पर विचार किया।

* * *

उधर मालव देश के राजा प्रतापसिंह के दुर्ग में स्थित तीनों राजकुमारियों के संबंध में एक विचित्र घटना घटी। उदयन प्रतापसिंह के यहां पहुंचकर दूसरे दिन जब जानेवाला था, तब राजा ने एक योजना बनाई। उदयन जब गहरी नींद सो रहा था तब राजा ने स्वयं उदयन के अंजन और भस्म चुरा लिये।

दूसरे दिन जब उदयन वहाँ से चला गया, राजा ने राजकुमारियों को अपने निकट बुलाया, अंजन व भस्मों का प्रयोग करके उन्हें पूर्ववत् स्वस्थ बनाया। अब वे पहले की भांति सुंदर एवं आकर्षक दिखाई देने लगीं। राजा उनकी सुंदरता पर मुग्ध हो गया।

राजा प्रतापसिंह ने जुड़वीं राजकुमारियों के साथ विवाह करना चाहा और यह बात उनके सामने प्रकट की, मगर राजकुमारियों ने प्रतापसिंह के साथ विवाह करने से इनकार किया। इस पर राजा ने धमकी दी, पर कोई फ़ायदा न रहा। तब क्रोध में आकर राजा ने उन्हें बन्दी बनाकर कारागर में रखा। इस अप्रत्याचित घटना पर राजकुमारियाँ दुख में डूब गईं।

पाताल गृह से संध्याकुमार तथा निशीथ को ले जाकर राक्षस ने सरोवर के तट पर खड़ा किया और धमकी देनेवाले स्वर में कहा—"दुष्टो, तुम्हें आखिरी बार एक और मौक़ा दे रहा हूँ। अब भी सही, तुम लोग सच बता दो कि तुम्हारा बड़ा भाई कहाँ चला गया है? वरना अभी तुम्हारे सर उड़ा दिये जायेंगे।" इन शब्दों के साथ परसे लिये तैयार खड़े अपने अनुचरों को दिखाया।

उन्हें देख संध्याकुमार तथा निशीथ पल भर स्तब्ध खड़े रह गये, तब निशीथ ने हिम्मत बटोरकर कहा—"हम

सच-सच बता रहे हैं कि हमारे भाई का पता बिलकुल हम नहीं जानते। मगर हमें पूर्ण विश्वास है कि यहाँ से हमें मुक्त करेंगे तो नाना यातनाएँ झेलकर हम उनको ढूंढ़ लेंगे। इसलिए हमारी बातों पर विश्वास करके हमें मुक्त कर दो, हम शीघ्र ही अपने बड़े भाई के साथ वापस लौट आयेंगे।"

"ओह! तुमने बड़ी अच्छी युक्ति निकाली। तुम्हारी ये चालें मेरे सामने चलने की नहीं हैं। क्या तुम यह समझते हो कि आज तक तुम लोगों ने जो कुछ धोखा दिया, उसे मैं भूल बैठा हूँ? मुझे इस बात का क्या भरोसा है कि तुम वापस लौट आओगे?" राक्षस ने पूछा।

इस पर निशीथ ने संध्याकुमार की ओर इशारा करते हुए बताया–"तब तो तुम एक काम करो। तुम मेरे भाई को अपने ही यहाँ बन्दी बनाकर रख लो। हम अपने भाई को किसी भी हालत में त्याग नहीं सकते हैं न? उसको बचाने के लिए ही सही, हमें तुम्हारे पास लौट कर आना ही होगा।"

"अच्छी बात है। एक बात याद रखो। खासकर मैं तुम्हारे भाई को इसलिए बन्दी बनाना चाहता हूँ कि उसके पास कुछ असाधारण भस्म और अंजन रह गये हैं। जब तक वे अंजन व भस्म उसके पास रह जायेंगे तब तक मुझे नींद तक न आयेगी। इसलिए तुम्हारे भाई को यहाँ पर आने की ज़रूरत नहीं, तुम किसी न किसी उपाय से वे भस्म और अंजन लाकर मुझे सौंप दो। उसी वक़्त मैं तुम्हारे छोटे भाई को मुक्त करूंगा। समझे!" राक्षस ने अपनी शर्त बताई।

संध्याकुमार ने भी इस शर्त को मान लिया। तब निशीथ वहाँ से चल पड़ा। राक्षस ने अपने अनुचरों को आदेश दिया कि अन्य हँसों के साथ निशीथ को भी हँस बना कर सरोवर में रखे, तब वह वहाँ से चला गया। (और है)

क्षत्रिय-धर्म

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, तुम्हें इस बात के लिए डरने की आवश्यकता नहीं कि तुम्हारे इस प्रयत्न में तुम्हें असफलता मिलेगी। क्योंकि असफलता के द्वारा फ़ायदा उठानेवाले मणिकुंज जैसे लोग भी हैं। श्रम को भुलाने के लिए मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ। सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीनकाल में मणिपुर राज्य पर सिंहभूपाल शासन करता था। उसके मंदारवल्ली नामक एक असाधारण रूपवती पुत्री थी। सौंदर्य के साथ वह प्रज्ञावती भी थी। इसलिए उसके युक्त वयस्का होते-होते वह सभी विद्याओं में पारंगत हो गई। सिंहभूपाल

बेताल कथाएँ

ने उसका विवाह करना चाहा और योग्य वर का अन्वेषण करने लगा।

कई वर्षों के प्रयत्नों के बावजूद भी मंदारवल्ली के योग्य वर न मिला। आखिर राजा को कनकपुरि का राजकुमार मणिकुंज सब प्रकार से योग्य प्रतीत हुआ।

मगर मणिकुंज के मामले में सिंहभूपाल के सामने एक समस्या उत्पन्न हुई। मणिपुर की तुलना में कनकपुरि राज्य अत्यंत छोटा था। ऐसे छोटे राज्य के राजकुमार के पास जाकर अपनी पुत्री के साथ विवाह करने का प्रस्ताव रखना सिंहभूपाल की प्रतिष्ठा के विरुद्ध था। पर साथ ही मणिकुंज जैसे योग्य जामाता का तिरस्कार करना भी राजा को उचित न लगा।

ऐसी स्थिति में राजा सिंहभूपाल के मंत्री ने एक उपाय सुझाया। वह यह था कि सिंहभूपाल मणिकुंज पर आक्रमण करके उसे पराजित करे, तब दोनों के बीच जो समझौता होगा, उसके अनुसार अपनी पुत्री का विवाह मणिकुंज के साथ करे।

इसी योजना के अनुसार सिंहभूपाल ने अपनी सेना समेत मणिकुंज के राज्य पर हमला किया। इसे देख मणिकुंज आश्चर्य में आ गया। वह थोड़े ही समय पहले गद्दी पर बैठा था और उसके तथा मणिपुर राज्य के बीच किसी प्रकार की शत्रुता भी न थी। मणिकुंज की समझ में न आया कि अकारण ही सिंहभूपाल ने उसके राज्य पर आक्रमण क्यों किया है? मणिकुंज ने अपने मंत्रियों की सलाह ली। इस पर उन लोगों ने सुझाया—" महाराज, हम युद्ध के लिए तैयार नहीं हैं। यदि हम युद्ध करे तो सिवाय जनता के विनाश के कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा। इसलिए फिलहाल संधि कर लेना सब तरह से उचित होगा।"

मंत्रियों की सलाह के अनुसार मणिकुंज ने सिंहभूपाल के यहाँ संधि का प्रस्ताव भेजा। सिंहभूपाल ने तत्काल स्वीकार

किया और समझौते के लिए मणिकुंज को बुला भेजा। मणिकुंज को देखने के बाद सिंहभूपाल विस्मय में आ गया। उसने बताया कि वह अपनी पुत्री का विवाह मणिकुंज के साथ करके इस रूप में समझौता कर लेगा। यह प्रस्ताव मणिकुंज को कुछ अस्वाभाविक-सा लगा, फिर भी मणिकुंज ने सिंहभूपाल की पुत्री के साथ विवाह करने की सम्मति दी।

सिंहभूपाल इस प्रकार अपने कार्य की सफलता देख प्रसन्नतापूर्वक राजधानी को लौट आया। मणिकुंज के बारे में मंदारवल्ली ने काफ़ी सुन रखा था, इसलिए वह मणिकुंज के साथ विवाह करने के लिए कुतूहल भी थी। यह बात सिंहभूपाल भी जानता था। परंतु जब मंदारवल्ली ने यह समाचार सुना कि उसका पिता मणिकुंज पर हमला करने जा रहा है, तब वह बहुत दुखी हुई और अपने पिता को रोकने का प्रयत्न भी किया। इसे देख राजा सिंहभूपाल मन ही मन अत्यंत प्रसन्न हुआ, किंतु अपने कपट नाटक का परिचय मंदारवल्ली को न दिया। राजा अपनी पुत्री के मन की बात जानता था कि वह मणिकुंज के साथ विवाह करने में प्रसन्नता का ही अनुभव करेगी, इस कारण उसको अपने इस स्वांग का परिचय दिये बिना ही संधि के बहाने मंदारवल्ली तथा मणिकुंज के विवाह का प्रबंध किया।

मगर सिंहभूपाल ने युद्ध भूमि से लौटकर जब अपनी पुत्री के विवाह की बात बताई, तब मंदारवल्ली ने स्पष्ट बताया कि वह इस विवाह के लिए तैयार नहीं है। राजा ने अनेक प्रकार से समझाया, पर मंदारवल्ली ने न माना। इसलिए विवश होकर सिंहभूपाल ने मणिकुंज को सूचित किया कि पूर्व निर्णीत विवाह रद्द हो गया है। तब वह यह सोचकर उदास रहने लगा कि शायद उसकी पुत्री के योग्य वर कहीं न मिले।

सिंहभूपाल के यहाँ से विवाह के रद्द हो जाने का समाचार जब मणिकुंज ने सुना, तब उसने अनुभव किया कि उसका अपमान किया गया है। तत्काल उसने सेना की तैयारी की और सिंहभूपाल पर आक्रमण कर दिया। अपनी छोटी सेना के साथ सिंहभूपाल को जीतना असंभव था। युद्ध के प्रारंभ होते ही सिंहभूपाल तथा मणिकुंज का आमना-सामना हुआ। जल्द ही सिंहभूपाल ने मणिकुंज को निहत्था कर दिया और उसको बन्दी बनाया। किंतु उसकी वीरता ने शत्रु-सैनिकों को भी चकित कर दिया।

मणिकुंज पर विजय प्राप्त करने पर सिंहभूपाल को विशेष प्रसन्नता न हुई। वह सोच ही रहा था कि उसके साथ कैसा व्यवहार किया जाय, तभी मंदारवल्ली ने अपने पिता के निकट पहुँचकर बताया कि उसका विवाह मणिकुंज के साथ करके उसके साथ समझौता कर ले। फिर क्या था, सिंहभूपाल के सिर से बहुत भारी बोझ उतर गया। उसने अपनी पुत्री का विवाह मणिकुंज के साथ कर दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन, मंदारवल्ली को मणिकुंज के साथ विवाह करने का जब मौक़ा मिला, तब उसने क्यों अस्वीकार कर दिया? वही मणिकुंज जब शत्रु बनकर अपने पिता के साथ युद्ध करने आया और युद्ध में पराजित हो गया, तब मंदारवल्ली ने

उसके साथ विवाह करने की इच्छा क्यों प्रकट की? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "मंदारवल्ली के व्यवहार से यह स्पष्ट मालूम हो जाता है कि वह कैसी कुशाग्रबुद्धि रखती है। यह बात सही है कि उसने पहले ही मणिकुंज को वर लिया है, किंतु वह यह नहीं जानती थी कि मणिकुंज ने भी उसे वर लिया है या नहीं! उन दोनों का विवाह करने के हेतु अपने पिता का मणिकुंज पर आक्रमण करना मंदारवल्ली को अच्छा न लगा। साथ ही यह बात भी उसे बिलकुल पसंद न थी कि मणिकुंज युद्ध में पराजित होकर विवशता की स्थिति में उसके साथ विवाह करने को राजी हो जाय। किंतु कम से कम ऐसा भी न हुआ, मणिकुंज क्षत्रियोचित रूप में युद्ध किये बिना ही संधि के प्रस्ताव को स्वीकार करके उसके साथ विवाह करने को तैयार हो गया। यह अपयश स्वीकार करना मंदारवल्ली के लिए अत्यंत दुर्भर प्रतीत हुआ कि उसका पति कायर है। इसीलिए उसके साथ विवाह करने से अस्वीकार किया। लेकिन जब मणिकुंज स्वयं राजा सिंहभूपाल पर आक्रमण करने निकला, तभी मंदारवल्ली के संदेहों का निवारण हो गया। यदि उसके साथ विवाह करने की इच्छा न हो तो मणिकुंज को युद्ध करने की आवश्यकता न थी। विजय प्राप्त करने की संभावना न रहने पर भी युद्ध के लिए सन्नद्ध होनेवाले क्षत्रिय की वीरता पर संदेह नहीं किया जा सकता। क्षात्रधर्म युद्ध करने में है, केवल विजय प्राप्त करने में ही नहीं! इसी कारण से मंदारवल्ली ने इस बार मणिकुंज के साथ विवाह करने की स्वीकृति दी।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

१६६. प्राकृतिक शिल्प

दक्षिणी डकोटा राज्य (उत्तर अमेरिका) में "मरुभूमि" नामक प्रदेश हैं। वह प्रदेश उर्वरा नहीं है, इस कारण से वहां पर वनस्पति नहीं उगती। भौगोलिक कालमान के अनुसार वह प्रदेश "*निकट भविष्य तक*" *जल के गर्भ में था,* वैज्ञानिकों ने अनेक वर्षों के अनुसंधान के पश्चात यह निष्कर्ष निकाला है। जल के भीतर मिट्टी की परतें किस प्रकार विचित्र रूपों में जमी हुई हैं, इस चित्र में दर्शित हैं।

उस मरुभूमि में सबको आश्चर्य चकित करनेवाले सहज शिल्पों के अतिरिक्त वैज्ञानिकों के लिए विशेष महत्व पूर्ण मानेजानेवाले प्राचीन प्राणियों के अवशेष भी उपलब्ध हुए हैं। उन प्राचीन प्राणियों में तीन अंगुलियों से युक्त पैरोंवाले घोड़े, मगर-मच्छ, गैण्डे, छुरी जैसे दाढ़ोंवाले शेर, हिरण, ऊँट, छोटे छोटे चूहे जाति के मृग, १२ फुट लंबी मछली, तथा अनेक अन्य जानवर हैं। सब से विचित्र वस्तु "ब्रांटोतीरियम" नामक जानवर की खोपड़ी की हड्डी है। यह गैण्डे की आकृति में हाथी जैसे परिमाण में है। इन शिल्पों का निर्माण मानव ने नहीं किया, अपितु प्रकृति के द्वारा स्वयं निर्मित हैं, अतः ये प्राकृतिक शिल्प कहे जा सकते हैं।
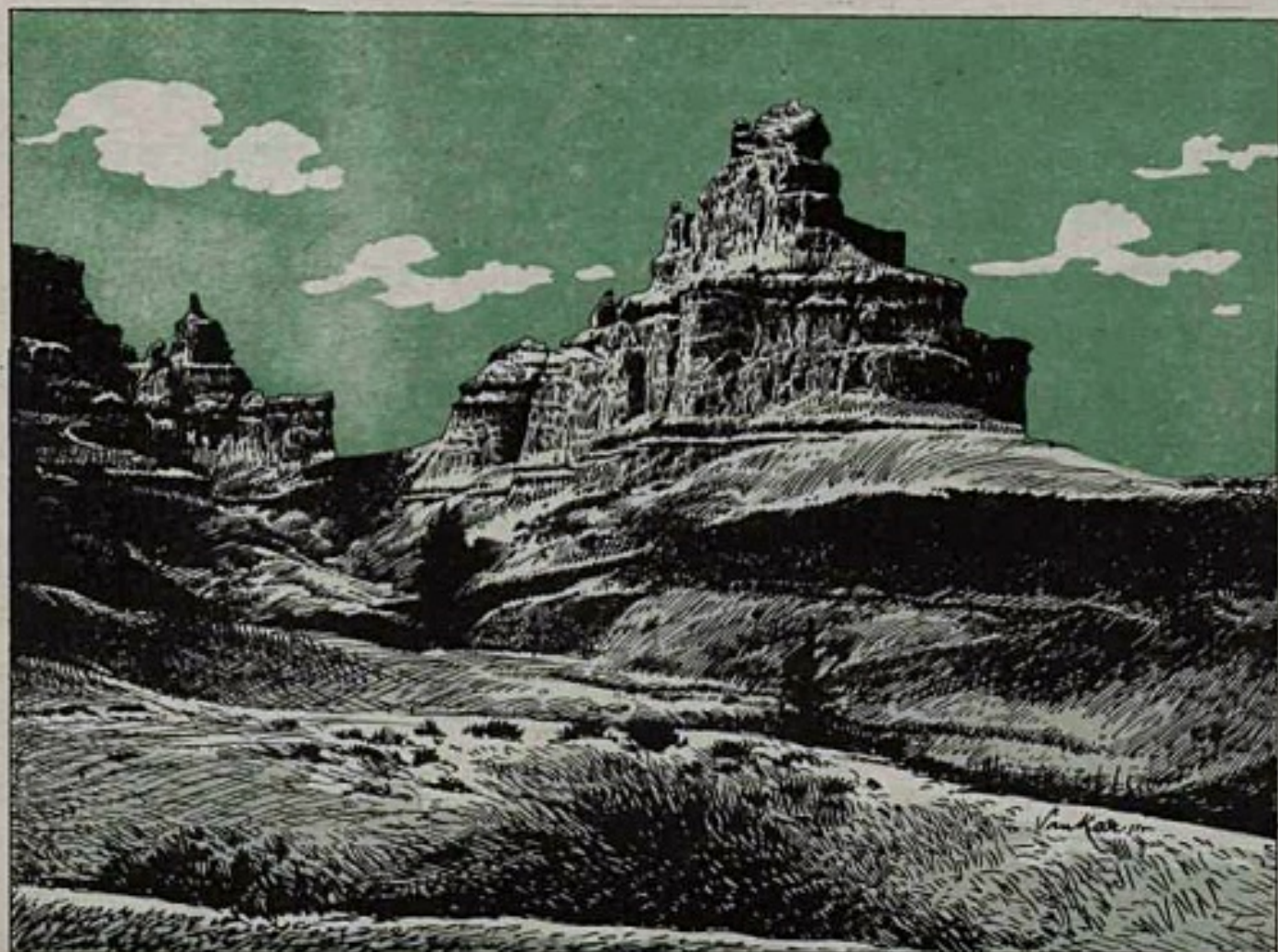
दरबारी विदूषक

राजा कृष्णदेव के दरबार में गोपाल नामक एक विदूषक था। वह न केवल मसखरा था, बल्कि अनेक विद्याओं में प्रवीण था। वह इंद्रजाल भी जानता था। मगर गोपाल अपनी इंद्रजाल-विद्या का प्रदर्शन कर लोगों का मनोरंजन नहीं करता था। राजा तक को ज्ञात न था कि गोपाल इंद्रजाल की जानकारी रखता है।

राजा कृष्णदेव गोपाल को बहुत चाहता था, इसलिए जब भी गोपाल के लिए कोई ज़रूरत पड़ती, राजा उसकी मदद करता था। परंतु गोपाल हद से ज्यादा फ़िज़ूल खर्ची था। जब हाथ में पैसे न होते, तब राजा के सामने कोई न कोई बहाना करके धन वसूल कर लेता था।

धीरे-धीरे गोपाल की यह करनी राजा के लिए भी असह्य मालूम हुई। राजा ने गोपाल को निश्चित वेतन के अतिरिक्त एक पैसा भी अधिक देना बंद कर दिया। इससे गोपाल उलझन में पड़ गया और राजदरबार के अपने मित्रों से कर्ज लेने का प्रयत्न करने लगा। मगर राजा ने पहले ही दरबारियों को आगाह कर दिया था कि कोई भी व्यक्ति गोपाल को कर्ज न दे।

गोपाल का ससुर हीरादत्त रानीपुर राज्य का व्यापारी था। हीरादत्त ने कृष्ण देव के राज्य के एक व्यापारी के यहाँ अमूल्य रेशमी वस्त्रों का सौदा किया था। इसलिए वह कृष्णदेव के राज्य के लिए रवाना हुआ। मगर राज्य की सीमा पर डाकुओं ने हीरादत्त को लूट लिया और खाली हाथ छोड़ दिया। वह अपनी पुत्री तथा दामाद से मिलने के पहले रेशमी वस्त्रों के व्यापारी के यहाँ गया, अपनी बुरी हालत का परिचय देकर माल उधार में देने की प्रार्थना की।

ए. सी. सरकार, जादूगर

"हम उधार नहीं देते। यदि आप तीन दिनों के अन्दर मूल्य चुकाकर माल न ले जायेंगे तो आपने जो अग्रिम दिया है, वह भी वापस नहीं किया जाएगा।" व्यापारी ने साफ़ कह दिया।

"तो इसका मतलब है कि मुझसे जो शेष पाँच हज़ार रुपये मिलने हैं, वे नहीं चुकायेंगे तो मेरे अग्रिम दिये गये पैंतालीस हज़ार रुपयों से भी मुझे हाथ धो बैठना होगा?" हीरादत्त ने व्यापारी से पूछा।

"जी हाँ! हमारी शर्त तो यही थी!" व्यापारी ने जवाब दिया।

हीरादत्त को गाँव जाकर रुपये लाने का वक़्त न था, इसलिए उसने सोचा कि उसका दामाद तो राजा का विश्वास पात्र है, इसलिए वह फिलहाल पाँच हज़ार रुपये किसी प्रकार प्रबंध कर सकेगा।

यह सोचकर हीरादत्त अपने दामाद गोपाल के घर पहुँचा और सारा हाल सुनाया! हीरादत्त की समस्या गोपाल के लिए प्रतिष्ठा की समस्या बन बैठी थी। साथ ही वे तो महीने के अंतिम दिन थे। गोपाल पहले ही अपने परिवार का खर्च किफ़ायती के साथ चलाया करता था। गोपाल ने इस समस्या पर काफ़ी देर तक विचार किया, पर उसकी समझ में कोई उपाय न सूझा।

दूसरे दिन गोपाल रोज़ की भांति दरबार में गया। बड़ी देर तक इंतज़ार करने पर भी राजा कृष्णदेव दरबार में न आये। दो घंटे बाद मंत्री ने प्रवेश करके बताया कि राजा स्वयं रानी के कक्ष में अपने निजी काम में निमग्न हैं, इसलिए उस दिन दरबार नहीं लगेगा।

गोपाल आश्चर्य में आ गया। आखिर इसका कारण क्या होगा। थोड़ी देर बाद उसने एक विश्वासपात्र अंतःपुर की दासी के द्वारा वास्तविक समाचार जान लिया।

उस दिन सवेरे ही रानी ने अपने मायके जाने की तैयारी की और अपने साथ राजा को भी चलने का हठ किया।

राजा तो राज-काज में इतना व्यस्त था, कि वह राजधानी को छोड़ बाहर नहीं जा सकता था। राज्य की उत्तरी सीमा पर अशांति फैली हुई थी। राजा ने रानी को अनेक प्रकार से समझाया, पर रानी ने न माना।

"आपको मुझे अपने मायके ले जाना ही होगा; वरना मैं भोजन न करूँगी।" यों कहते वह बच्चे की तरह रो पड़ी।

यह समाचार मिलते ही गोपाल ने राजा के दर्शन करने की इच्छा प्रकट करते एक चिट भेजा। उसमें लिखा था– "महाराज, आपके सामने यदि कोई समस्या उत्पन्न हो गई हो तो कृपया इस गोपाल को न भूले। मेरे द्वारा कभी फ़ायदा भी हो सकता है।"

राजा का अनुचर गोपाल को भीतर ले गया। राजा ने गोपाल को सारा समाचार सुनाकर कहा–"गोपाल! क्या तुम रानी के हठ को दूर कर सकते हो? तुम जानते हो कि मैं इस हालत में राजधानी को छोड़ बाहर नहीं जा सकता।"

"महाराज! मैं कब आपकी सेवा के लिए प्रस्तुत नहीं हूँ? कृपया आज्ञा दीजिए!" गोपाल ने कहा।

"तब तो कोई उपाय करो। मैं तुमको खुश करूंगा।" राजा ने कहा।

"महाराज! महारानी ताश खेलने का शौक रखती हैं न! इसलिए मेरा प्रयत्न सफल होगा! मुझे दो-चार घंटे का समय दीजिए!" गोपाल ने निवेदन किया।

गोपाल घर लौट आया। अपनी जादू की सामग्री में से ताश निकाले। ये ताश विशेष रूप से जादू के लिए तैयार कराये गये थे। उस गट्ठी में जो बावन पत्ते थे, सब पर पान का राजा ही था। इसके साथ उसने एक साधारण ताश की गट्ठी भी ले ली। इसके बाद गोपाल एक साधू का वेश बनाकर राजा से मिलने गया। गोपाल ने कहा–"महाराज, आप महारानी

की मुख्य परिचारिका को बुला भेजिए। मुझे उनकी सहायता चाहिए।"

परिचारिका के आने पर गोपाल ने अपनी योजना बताई। अपनी दोनों ताश की गड्डियाँ उसके हाथ देकर उनमें एक पर लगाये गये चिह्न दिखाते हुए कहा–"मैं जब पहले तुम से ताश लाने को कहूँगा, तब तुम बिना निशानवाली गड्डी ले आओ, जब मैं तुम्हें यह गड्डी वापस करूँगा, तब तुम दोनों गड्डियाँ बदल कर, दूसरी बार निशानवाली गड्डी ले आना। मगर ख्याल रखो, महारानी पर यह बात प्रकट न हो, समझ गई हो न!"

इसके बाद गोपाल ने परिचारिका के द्वारा गड्डी बदलने का अभ्यास कराया, संतुष्ट हो जाने पर गोपाल ने परिचारिका को महारानी के यहाँ भेज दिया। परिचारिका रानी के पास जाकर बोली–"महारानीजी, राजमहल में कोई योगी पधारे हुए हैं। वे भविष्य बताते हैं। क्या बुला लाऊँ?"

"बुला लाओ, देखें, क्या बताते हैं?" रानी ने निराश पूर्ण शब्दों में कहा।

नकली साधू गोपाल को महारानी के यहाँ पहुँचा दिया गया। गोपाल ने रानी से कहा–"महारानीजी! आप दुखी मालूम होती हैं। क्या मैं एक बार आपका हाथ देख सकता हूँ?"

रानी ने अपना बायाँ हाथ बढ़ाया। गोपाल ने रानी के हाथ की रेखाओं की जाँच करके कहा–"महारानीजी! आपके पति ने आपकी किसी इच्छा को अस्वीकार किया है न?"

रानी ने कोई उत्तर न दिया।

गोपाल ने रानी के हाथ की ओर सावधानी से जांच कर कहा–"हाँ, हाँ, इसमें स्पष्ट मालूम होता है। आपने अपने पति को मायके चलने का अनुरोध किया। राजा ने इनकार किया है। वास्तव में असली बात यह है कि आपकी यात्रा शुभदायक है या नहीं? अरे, यह रेखा कैसी? आपको ताश खेलने का शौक

है! क्या यह सच है?" रानी ने संक्षेप में उत्तर दिया–"हाँ, सच है।"

"तब तो ताश की गड्डी की मदद से इस समस्या को हल करेंगे। क्या आपके पास नई गड्डी है?" गोपाल ने पूछा।

परिचारिका तत्काल चली गई और गोपाल की दी हुई साधारण ताश की गड्डी ले आई। गोपाल ने ताश के पत्तों को खोलकर फ़र्श पर इस तरह बिछा दिया जिससे सब के नंबर व चित्र दिखाई दे सके। सावधानी से उनकी जांच की, फिर सारे पत्ते परिचारिका के हाथ दे दिया।

इसके बाद गोपाल ने महारानी से पूछा–"महारानीजी! पिछली रात को आपने बुरे सपने तो नहीं देखे हैं न?" रानी ने बताया कि उन्होंने कोई सपना नहीं देखा।

"तब तो ताश के पत्तों का प्रयोजन होगा!" इन शब्दों के साथ गोपाल ने परिचारिका के हाथ से ताश की गड्डी ले ली। गोपाल जब महारानी से बात कर रहा था, तब परिचारिका ने ताश की गड्डियाँ बदल दीं और चिह्नवाली गड्डी गोपाल के हाथ में दी। उस गड्डी के पत्ते भी पीछे से देखने में दूसरी गड्डी के पत्तों जैसे ही थे, पर उसमें सब पान के राजा के ही चित्र थे।

गोपाल ने उन सारे पत्तों को मिला दिया, तब उन्हें पंखे की आकृति में इस

तरह बिछा दिया जिससे पत्ते के चित्र व नंबर दिखाई न दे। तब बोला–"महारानीजी! इन बावन पत्तों में से आप अपनी पसंद का कोई एक पत्ता निकालिये। उसके द्वारा पता चल जाएगा कि आपने जो निर्णय लिया, वही सही है अथवा महाराजा का निर्णय। आप जो पत्ता उठायेंगी, वह अगर पान के राजा का हो तो महाराजा की विजय मानी जाएगी। यदि दूसरा पत्ता निकल आएगा तो आप का निर्णय सही माना जाएगा।"

महारानी ने एक पत्ता निकाल कर उसे देखे बिना फ़र्श पर रख दिया। गोपाल ने बाक़ी पत्तों को परिचारिका के हाथ दिया। उसी समय राजा वहाँ पर पहुँचा। परिचारिका के हाथ की गड्डी अपने हाथ में लेकर उसे छिपाते हुए बोला–"अरे, यहाँ पर क्या हो रहा है?"

परिचारिका ने सारा समाचार सुनाया। पत्ते को गोपाल ने उल्टा किया तो वह पान के राजा का पत्ता निकला।

"महारानीजी! ऐसा लगता है कि यह वक़्त आपके मायके जाने के लिए अनुकूल नहीं है। हो सकता है कि रास्ते में कोई खतरा पैदा हो जाय!" गोपाल ने समझाया। गोपाल की बातों पर रानी का विश्वास जम गया। वह बोली–"तब तो मैं अपनी यात्रा स्थगित करूँगी।"

गोपाल को मुक्त करने के ख़्याल से राजा बोला–"साधू महाराज! मेरे भी कमरे में आकर मेरा भविष्य बताइए।" यों कहते गोपाल को अपने कमरे में खींच ले गया।

कमरे में पहुँचने पर राजा ने कहा–"गोपाल! तुमने कमाल कर दिया!" इन शब्दों के साथ एक थैली निकाल कर उसके हाथ देते हुए बोला–"यह तुम्हारे लिए पुरस्कार है। घर जाकर गिन लो।"

उस थैली में कुल पंद्रह हज़ार रुपये के क़ीमती सोने के सिक्के थे। हीरादत्त की ज़रूरत से भी ज़्यादा रुपये उसे मिल गये थे।

भाग्य का खेल

एक गाँव में रामलाल नामक एक सूदखोर था। उसके पुरखे भी सूदखोर ही थे। इस व्यापार में रामलाल के पुरखों ने लाखों रुपये कमाये थे। इसलिए रामलाल ने भी अपने पुरखों की भांति अपने व्यापार को बढ़ाने में अनेक प्रकार के धोखे दिये और पाप भी किये। मगर रामलाल की विशेषता यह थी कि ईश्वर पर उसका अपार विश्वास था। वह ईश्वर की पूजा किये बिना कोई काम करता न था। अपने व्यापार के लाभ में से एक अंश किसी मंदिर को मनौती के रूप में चुकाया करता था।

रामलाल के कुलशेखर नामक एक पुत्र था। अपने पिता के द्वारा रोज ईश्वर की पूजा करते देख कुलशेखर के मन में भी भगवान के प्रति अपार भक्ति पैदा हुई। उसकी उम्र के बढ़ने के साथ उसकी भक्ति भी बढ़ती गई। कुलशेखर का यह विश्वास था कि उसका पिता भगवान के प्रति अनुपम भक्ति रखता था, इस कारण उसके व्यापार की वृद्धि हुई है।

कुलशेखर जब युवावस्था को प्राप्त होगा, तब उसे व्यापार के रहस्य बताने का रामलाल ने निश्चय किया। मगर अचानक रामलाल की मृत्यु हो गई।

रामलाल के मरने के बाद कुलशेखर ने सूदखोरी का व्यापार चालू रखा। भगवान के प्रति उसका विश्वास भी अमित रहा। वह निर्मल हृदय से बिना किसी प्रकार की कामना के भगवान का ध्यान किया करता था। उसका व्यापार भी चमकता गया। इसका वास्तविक कारण कुलशेखर ने भगवान की अनुकंपा ही माना। अपने पिता के मरने के एक वर्ष बाद कुलशेखर ने हैमवती नामक कन्या के

गोविंदराम

साथ विवाह किया। वह भी ईश्वर भक्ति रखनेवाली थी, इसलिए इसे भी उसने अपने लिए भाग्य की बात मानी। मगर जब से वह गृहिणी बनकर कुलशेखर के घर आई, तब से कुलशेखर के व्यापार में लाभ के बदले नुक़सान ही होता रहा, फिर भी वह इस पर कोई विशेष ध्यान देता न था।

छे महीने बीतते-बीतते उसके खेत बाढ़ की वजह से बह गये। फसलें तो नष्ट हो गईं, साथ ही खेतों में रेतीले टीले पैदा हो गये। एक महीना और बीता, कुलशेखर की दूकान को चोरों ने लूट लिया। एक रात को उसके घर में आग लग गई और सारा घर जलकर राख हो गया। वह और उसकी पत्नी जान बचाकर घर से बाहर निकल आये।

कुलशेखर जब अपना सर्वस्व खो बैठा, तब उसे लगा कि उसका दिमाग खराब होता जा रहा है! वह जिस गाँव में एक धनी के रूप में अपने दिन बिता पाया था, उसी गाँव में भिखारी बनकर रहना उसे अच्छा न लगा। इसलिए किसी अनजाने प्रदेश में जाकर भीख माँगकर पेट भरने के ख्याल से अपनी पत्नी को साथ ले गाँव से निकल पड़ा। शाम के होते होते वे दोनों एक गाँव की सीमा पर पहुँचे और उस रात को एक शिवाले में पहुँचकर मंदिर के प्रांगण में लेट गये।

आधी रात के वक़्त आसमान में काले बादल छा गये और प्रचण्ड वायु बहने लगी। अपने पति की बगल में लेटी हैमवती अचानक जाग उठी। उसने अपना सिर उठाकर देखा, तो उजड़ा ध्वज स्तम्भ हवा में हिल रहा है, वह किसी भी क्षण गिरने की हालत में था। हैमवती ने अपने पति को थपकी देकर जगाया। दोनों जल्दी-जल्दी मंदिर के भीतर चले गये। दूसरे ही क्षण भारी आवाज़ के साथ ध्वज स्तम्भ टूटकर उसी जगह आ गिरा जहाँ पर पहले वे दोनों लेटे हुए थे।

अपने सर्वस्व के खो जाने के बाद प्राणों के लिए खतरा उत्पन्न होते देख कुलशेखर ने अपने मन में यह निर्णय कर लिया कि अपनी इन सारी विपदाओं का कारण उसकी पत्नी ही है। उसने हैमवती से कहा–"तुम्हारे साथ विवाह करने के बाद ही ये सारे अनर्थ शुरू हो गये हैं। तुम्हारे कारण ही ईश्वर की कृपा से मैं वंचित हो गया हूँ। इस वक़्त मैं अपने प्राणों को खोते-खोते बाल-बाल बच गया हूँ। न मालूम, आगे भी तुम मेरे साथ रहोगी तो कितनी विपदाओं का सामना करना पड़ेगा। अब तुम मुझे अपना पापी चेहरा मत दिखाओ, अभी अभी तुम अपने मायके चली जाओ।"

हैमवती आँसू बहाते वहाँ से चली गई। इतने में मंदिर के गर्भगृह से एक शिवयोगी शीघ्रता के साथ बाहर आया। हैमवती को रोककर कुलशेखर को समझाया–"बेटा! देवी जैसी तुम्हारी गृहलक्ष्मी को तुम क्यों भगा रहे हो?"

"यह तो मेरे गृह की लक्ष्मी नहीं, मेरे ललाट की खलरेखा है। जब से इसने मेरे घर में क़दम रखा तब से मेरा सर्वनाश होता रहा है। मैं ईश्वर की कृपा से भी वंचित हो गया हूँ। अब तो मेरे प्राण तक निकलते-निकलते बच गये।" इन शब्दों के साथ कुलशेखर ने अपना सारा वृत्तांत सुनाया।

सारी बातें सुनकर शिवयोगी ने मंदहास करते हुए कहा–"अरे पगले! तुम्हारी बातों से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यह तो तुम्हारे लिए भाग्यदेवी है! जो घटनाएँ हुई हैं, उन्हें ठीक से न समझने के कारण तुम भ्रम में पड़े हुए हो।"

"आप यह क्या कह रहे हैं?" कुलशेखर ने विस्मय में आकर पूछा।

"जब से इस गृहिणी ने तुम्हारे घर में क़दम रखा, तभी से तुम्हें ईश्वर की कृपा प्राप्त होने लगी है। तुम्हारे बाप-दादों ने अनेक पाप करके जो संपत्ति

जोड़ ली, उसका तुम वारिस बन गये। इस कारण तुम्हें भी उनके पाप का भागी बनना पड़ा है। तुम्हारी पत्नी भक्तिन थी और तुम्हारी भक्ति भी परिपूर्ण हो गई, इस कारण भगवान ने तुम्हारे प्रति अनुकंपा की। भगवान ने तुमको पवित्र बनाने का कार्य अभी अभी प्रारंभ किया है। संयोग से जो घटनाएँ हुई हैं, वे सब उसी कार्यक्रम से संबंधित हैं। विवाह के पूर्व तुम्हारा जो व्यापार चमक उठा, वह ईश्वर की कृपा की वजह से नहीं, वह तो तुम्हारा स्वावलंबन था, और तुम्हारी क़िस्मत के कारण ही था। वास्तव में आज से तुम्हारी आयु समाप्त हो गई है। फिर भी ईश्वर की कृपा से तुम बच गये हो। ईश्वर की प्रेरणा से ही तुम्हारी पत्नी ने तुम्हारे प्राण बचाये हैं। इस वक़्त तुम दोनों पाप रहित पुण्यात्मा हो! अब तुम पुनः अपना व्यापार शुरू करो। ईश्वर की कृपा से तुम फिर धनी बन जाओगे।" शिवयोगी ने समझाया।

कुलशेखर की समझ में सारी बातें स्पष्ट हो गईं। उसने हैमवती से क्षमा मांगी, शिवयोगी के चरणों में प्रणाम करके पूछा—"महात्मा! मेरे मन में एक संदेह है! मेरे जैसे मेरे पिता भी ईश्वर भक्त थे। उन्हें ईश्वर की सहायता क्यों प्राप्त नहीं हुई?"

"तुम्हारे पिता के मन में ईश्वर के प्रति भक्ति न थी, बल्कि विश्वास था। उसने भगवान के साथ ही व्यापार किया। उस व्यापार में उसने अनेक धोखे दिये, पाप भी किये। अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए भगवान की पूजा करना भक्ति नहीं कहलाती। इसीलिए उसको ईश्वर की सहायता प्राप्त नहीं हुई।" शिवयोगी ने स्पष्ट किया।

कुलशेखर का संदेह जाता रहा। उसने शिवयोगी का आशीर्वाद प्राप्त कर उसी गाँव में फिर से व्यापार शुरू किया, अनति काल में ही धनी बना, दान-पुण्य करते पुण्यात्मा कहलाया।

दो बूढ़े!

एक गांव में महेश और जगदीश नामक दो दोस्त थे। उनके विचार बिलकुल मेल नहीं खाते थे। महेश ईमानदारी से मेहनत करना चाहता था, जब कि जगदीश काम चोर था। अपने गाँव में पेट भरने का कोई उपाय न देख दोनों राजधानी की ओर चल पड़े।

मुंह अंधेरे जाग कर दोनों दिन भर चलते रहे। अंधेरा फैल गया। जाड़े का मौसम था। वे दोनों यही सोच रहे थे कि उस रात को कहाँ पर बिताया जाय, तभी उन्हें थोड़ी दूर पर एक मैदान में एक महल दिखाई दिया। महल के सामने एक झोंपड़ी थी और बगल की ओर एक बगीचा भी था। महल और झोपड़ी के बीच जो खाली जगह थी, जहाँ पर अलाव जलाकर कोई दो बूढ़े हाथ-पैर सेंक रहे थे। उनमें से एक क़ीमती वस्त्र पहने हुए था, उसके सिर पर मुर्गी के परोंवाली टोपी थी। दूसरा फटे-पुराने वस्त्र पहना था।

दोनों मित्रों ने बूढ़ों के पास जाकर पूछा–"हम दोनों मुसाफ़िर हैं। क्या आज रात को हमें आश्रय दे सकते हैं?"

धनी बूढ़े ने कहा–"क्यों नहीं, ज़रूर दूंगा, यह महल मेरा ही है! मेरे पास विशिष्ट प्रकार की मुर्गियाँ हैं, वे अण्डे नहीं देतीं, बल्कि चूज़ें ही देती हैं। उनका मांस भी बढ़िया होता है। क्या हम तीन मुर्गियों को भून कर खा ले?" यह बात सुनते ही जगदीश की बांछें खिल गईं। पर महेश को बूढ़े की बातें पसंद न आईं। उसने दूसरे बूढ़े की ओर देखा।

दूसरे बूढ़े ने समझाया–"भाई, मैं तो गरीब हूँ। मेरे पास जो रूखा-सूखा है, उसी में से थोड़ा तुम्हें भी खिलाऊंगा।"

नवीना अग्रवाल
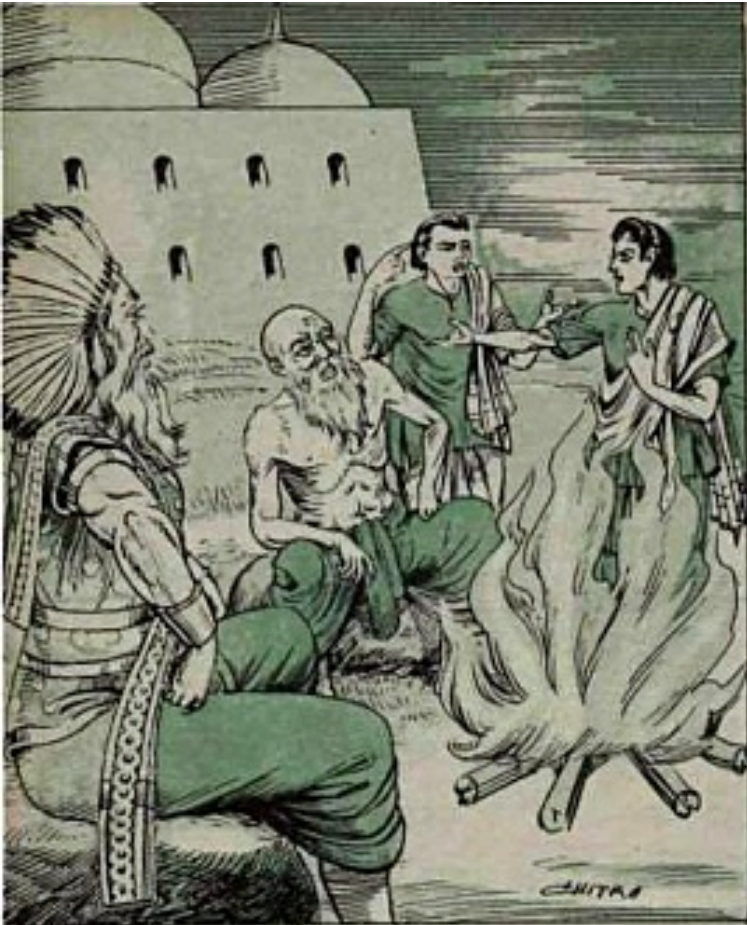
"दादाजी, हम तुम्हारी झोंपड़ी में ही रहेंगे।" महेश ने अपना निर्णय सुनाया।

"अरे, तुम तो पागल नहीं हो गये हो? इन्द्र महल जैसे भवन को छोड़ इस कंगाल की झोंपड़ी में पैर सिकोड़ कर सोना चाहते हो?" जगदीश ने डाँटा।

धनी ठठा कर हँस पड़ा और बोला– "हाँ, हाँ, तुम इसको समझाओ, यह कोई देहाती जानवर जैसा लगता है!"

महेश अपने क्रोध पर नियंत्रण रखते हुए जगदीश से बोला–"तुम चाहो तो इस धनवान के मेहमान बन जाओ। मैं इस भले आदमी का ही अतिथि बन जाऊँगा।" यों कहकर महेश गरीब के साथ मिलकर उसकी झोंपड़ी में चला गया।

धनी के महल के बाजू में एक झोंपड़ा था जिसमें पच्चीस से ज़्यादा मुर्गियाँ थीं। बूढ़ा धनी दो मुर्गियों को पकड़ लाया। दोनों ने खुशी से उन दो मुर्गियों को भून डाला और महल के भीतर ले गये।

गरीब बूढ़े के यहाँ चार बकरियाँ थीं। उसने बकरियों के दूध दुह दिया। दोनों ने ज्वार का भात खाया और दूध पिया। इसके बाद वे दो चारपाइयाँ लगा कर बातचीत करने लगे।

महल में से स्वादिष्ट भोजन की गंध आ रही थी। जगदीश तथा धनी ने बकवास करते हुए खाना खाया। इसके बाद लगा कि दोनों ने शराब का भी सेवन किया है। फिर जगदीश की आवाज़ सुनाई नहीं दी। धनी व्यक्ति ही आधी रात तक गाते व चिल्लाता रहा।

गरीब बूढ़े ने गहरी सांस ली और कहा–"मैं चार साल से यहाँ रह रहा हूँ। दो साल पहले यह दुष्ट आ पहुँचा। पहले इसने भी मेरे ही जैसे झोंपड़ी बना ली। मगर साल भर पूरा होने के पहले ही इसने यह महल बनवाया। इसके यहाँ आने के बाद मेरा आतिथ्य स्वीकार करनेवाला व्यक्ति तुम्हीं एक हो! मगर

आश्चर्य की बात यह है कि धनी के अतिथि बनकर जो भी आते हैं, वे मुँह अंधेरे ही उठकर चले जाते हैं। सवेरा होने पर कोई दिखाई नहीं देता। इसके आने के बाद में अपनी मानसिक शांति खो बैठा हूँ।"

इसके बाद वे दोनों लेट कर सो गये।

महेश जब नींद से जाग उठा, सूर्य आसमान पर चढ़ आया था। घबरा कर उठ बैठा। धनी के घर जाकर दर्वाजा खटखटाया और जगदीश का नाम लेकर पुकारा। धनी बूढ़े ने द्वार खोलकर कहा–"तुम्हारे मित्र तो बहुत ही तड़के उठकर चले गये हैं।"

महेश को लगा कि इसमें ज़रूर कोई धोखा है। जगदीश किसी भी हालत में उसको सूचित किये बिना जा नहीं सकता।

"यह कोई जादू करता मालूम होता है।" गरीब बूढ़े ने कहा।

"इसके जादू का फ़ैसला आज रात को में कर दूंगा।" महेश ने कहा।

वह दिन भर जंगल में घूमता रहा और शाम को बूढ़ों के पास लौट आया। गरीब बूढ़े ने अनजाने बनकर कहा–"आओ भाई, फिर कैसे आना हुआ?"

"तुम्हारा ज्वार का खाना नहीं चाहिए। आज मैं अमीर मामा का अतिथि बनना चाहता हूँ।" महेश ने कहा।

"अरे दामाद! तुमने लाख रुपये की बात कही। चलो, हम मुर्गियों को भूनकर खा डालेंगे।" धनी बूढ़े ने बात बढ़ाई। इसके बाद दो मुर्गियाँ जलाकर धनी बूढ़ा तथा महेश महल के भीतर चले गये। दोनों के खाने के बाद धनी बूढ़े ने शराब पीने की बात कही, महेश ने बताया कि उसकी शराब पीने की आदत नहीं है।

"तुम जैसे लोगों के लिए मैंने मीठी शराब तैयार करवा कर रखी है।" बूढ़े धनी ने फिर कहा।

बीच के कमरे में शराब की दो थैलियाँ लटक रही थीं। बूढ़े धनी ने दायीं ओर की थैली में से एक गिलास

तथा बायीं तरफ़ की थैली में से दूसरी गिलास भरकर उसने दूसरा गिलास महेश के हाथ दे पीने को कहा।

"शायद नशा चढ़ जाय। तुम पहले पीकर दिखाओ तो।" महेश ने कहा।

बूढ़ा धनी घबरा गया, महेश के हाथ के गिलास को हटाते हुए कहा—"मुझे इसकी बू पसंद नहीं है! पहले कमरे के अन्दर आ जाओ, आराम से पियेंगे।"

महेश की शंका सच निकली। उसने झट से थैलियों को बदल डाला, अपने चाकू को निकाल कर पागल की तरह गाते नाचने लगा। बूढ़े धनी ने अपना गिलास गटागटा पीकर खाली कर दिया, तब बोला—"दायें हाथ की थैली में से एक और गिलास शराब लेते आओ।"

महेश ने जाकर दायीं तरफ़ की थैली में अपने चाकू से छेद किया। उसमें से शराब गिरने लगी। इसे देख बूढ़ा धनी चिल्ला उठा—"उफ! अमृत जैसी मेरी शराब!" यह कहते उस धार के नीचे अपना मुंह खोल दिया। उसने दो ही घूंट पी लिये थे कि उसकी जबान बंद हो गई और नीचे गिरकर तड़पते हुए वह मुर्गी के रूप में बदल गया।

महेश मुर्गियों के झोंपड़े की ओर दौड़ पड़ा। वहां पर मुर्गियों के बदले मनुष्य थे। उनमें जगदीश भी था। महेश ने फिर लौट कर देखा, एक बिलाव आकर मुर्गी को उठा ले जा रहा है।

"वाह! कैसा बड़ा महल है! हम आराम से यहीं रह जायेंगे।" जगदीश ने अपनी इच्छा प्रकट की।

"अरे, तुम्हारा यह बुरा हाल हो गया, तब भी तुम्हारी अक्ल ठिकाने नहीं लगी। तुम बिना मेहनत किये सुख भोगना चाहते हो! मेहनत करके कमाकर सुख भोगने में ही आनंद है।" महेश ने समझाया।

इसके बाद दोनों मित्रों ने वह महल गरीब बूढ़े को सौंप दिया, यात्रियों को आतिथ्य करने की सलाह देकर वे दोनों आगे बढ़े।

परिहास प्रिय

कोसल देश के राजा आनंदसेन को सब प्रकार की सुख-सुविधाएँ प्राप्त थीं, पर उन्हें आनंद का अभाव था। वे अकसर चिंतित रहा करते थे। वास्तव में इसके पीछे कोई कारण न था। उनके शासन में जनता किसी भी प्रकार की यातनाओं के बिना सुखपूर्वक अपने दिन व्यतीत करती थी। लोग कहा करते थे कि कोसल से ज्यादा शक्तिशाली तथा संपन्न देश दुनिया में दूसरा नहीं है।

राजकीय मामलों में डूबे रहकर जब वे फ़ुरसत पाते, तब उनके मन को रंजित करने के लिए अनेक प्रकार के मनोरंजन के साधन तैयार रहते थे। उन्हें परिवार संबंधी कोई उलझन न थी। उसकी पत्नी अनुपम रूपवती थी, बच्चे तो रत्न जैसे थे।

राजा आनंदसेन को सबसे ज्यादा प्रिय तो परिहासपूर्ण उक्तियाँ थीं। वे बिना थके असंख्य हास्य कहानियाँ सुनकर आनंद उठाया करते थे। मगर इसके बाद फिर वे किसी चिंता में डूब जाते थे।

राजा की इस अज्ञात चिंता के बारे में रानी के मुँह से जब मंत्री ने सुना, तब वह विस्मय में आ गया। बहुत सोच-विचारने पर भी राजा की चिंता का कारण ज्ञात न हुआ। अंत में मंत्री इस निर्णय पर पहुँचा कि राजा तो परिहास-प्रिय हैं। पर्याप्त मात्रा में हास्य प्राप्त न होने के कारण ही वे चिंतित हैं।

यों सोचकर मंत्री ने एक दरबारी विदूषक को नियुक्त करने का निश्चय किया। रानी ने भी मंत्री के विचार का समर्थन किया। रानी तथा मंत्री के सुझाने पर राजा ने भी दरबारी विदूषक को नियुक्त करने की स्वीकृति दी। मगर मंत्री ने सुझाव दिया कि विदूषक का

चुनाव स्वयं राजा ही करे तो ज्यादा उत्तम होगा।

सारे देश में यह ढिंढोरा पिटवाया गया कि दरबारी विदूषक को नियुक्त किया जाएगा और राजा ही स्वयं उस पद के योग्य व्यक्ति का चुनाव करेंगे। ढिंढोरा सुनकर अनेक वाचाल मज़ाकिये राजा की सेवा में पहुँचे। किंतु उनमें से एक भी व्यक्ति राजा के मन-पसंद का न निकला। इसलिए राजा ने उनमें एक को भी दरबारी विदूषक के पद पर नियुक्त नहीं किया। इस प्रकार कई महीने बीत गये। मगर दरबारी विदूषक का पद खाली ही रह गया। राजा की चिंता भी पूर्ववत् बनी रही।

उसी राज्य के एक कोने में एक छोटा-सा गाँव था जहाँ रामशर्मा नामक एक ब्राह्मण निवास करता था। रामशर्मा के तीन पुत्र थे। तीनों शिक्षित थे! उनमें बड़े पुत्र दोनों अच्छे बातूनी तथा परिहासपूर्ण कहानियाँ सुनाने में पटु थे? चमत्कारपूर्ण बातें कहना, हास्य कथाओं की कल्पना करके सुनाना, वे अच्छी तरह जानते थे। तीसरा इस विद्या में कच्चा जरूर था, पर सामने वाले व्यक्ति के मन की बात भांपने में प्रवीण था।

ढिंढोरा रामशर्मा के पुत्रों ने भी सुना, पर यह सोच कर उन लोगों ने उपेक्षा की, कि ऐसा भारी पद उन्हें हाथ लगने वाला नहीं है। मगर जब उन्हें यह मालूम हुआ कि अनेक मास बीत जाने के बाद भी उस पद के लिए किसी का चुनाव नहीं हुआ है, तो रामशर्मा के ज्येष्ठ व मंझले पुत्र अपनी क़िस्मत को अजमाने के ख्याल से राजधानी की ओर चल पड़े। उनके साथ छोटा लड़का भी निकल पड़ा। मंझले व बड़े भाई ने इसलिए छोटे को भी अपने साथ में ले लिया कि कम से कम उनकी सहायता के लिए वह भी साथ रह जाएगा।

राजधानी में पहुँचते ही बड़ा भाई राजा को देखने गया। राजा के दर्शन

करके वह लौट आया और मंझले से कहा–"मैंने राजा को जो कहानियाँ व चमत्कार सुनाये वे सब सुनकर वे हँसते-हँसते लोटपोट हो गये। उन्होंने मुझे सौ रुपये का पुरस्कार दिया और मेरा अभिनंदन भी किया। मगर इसके बाद न मालूम क्यों वे पहले की भांति चिंतत दिखाई दिये। विदूषक के पद के लिए राजा ने मेरा चुनाव नहीं किया। इसलिए तुम अच्छी तरह से सोच लो कि तुम्हें क्या करना होगा। कल तुम भी राजा के दर्शन करके अपने भाग्य की परीक्षा करो।"

दूसरे दिन मंझले ने जाकर राजा के दर्शन किये, राजा को हँसाया। दो सौ रुपये का पुरस्कार पाकर विदूषक के पद पर नियुक्त हुए बिना लौट आया।

अपने बड़े भाइयों के निरुत्साहित करने पर भी परवाह किये बिना तीसरे दिन छोटा युवक राजा के दर्शन करने गया। उसको देखते ही राजा ने पूछा–"बताओ, कोई विशेष समाचार है?"

"महाराज! आपने अनेक प्रकार की कहानियाँ तथा चमत्कारपूर्ण उक्तियाँ सुनी होंगी। मैं आपको विशेष प्रकार के समाचार सुनाने की सामर्थ्य नहीं रखता। मैं किसी अज्ञात चिंता से व्यथित हूँ। इस बहाने आपसे थोड़ी देर वार्तालाप करके अपनी चिंता से मुक्त होने यहाँ पर आया हूँ। सब के मुंह से मैंने सर्वत्र यही सुना

है कि चतुर एवं चमत्कारपूर्ण उक्तियाँ सुनाने में आप के जोड़ का कोई दूसरा नहीं है।"

राजा के पास बैठा मंत्री ये बातें सुन खीझ उठा और बोला–"तुम्हारा व्यवहार तो कुछ ऐसा है जैसे रोने वाला व्यक्ति जाकर मरनेवाले की शरण माँगता हो।"

इस पर राजा ने मंत्री को रोका और बताया कि उसे उस युवक के साथ थोड़ी देर तक एकांत में बात करने छोड़ दिया जाय। इसके बाद राजा तथा तीसरे भाई ने दो घंटे तक एकांत में बात की।

इसके बाद राजा ने मंत्री को बुला कर सुनाया कि उसके लिए अब विदूषक की आवश्यकता नहीं है, परंतु रामशर्मा के तीसरे पुत्र को अपने अंतरंगी सलाहकार के रूप में नियुक्त करनेवाला है।

यह बात जब रामशर्मा के बड़े पुत्रों ने सुनी तब वे आश्चर्य में आ गये और अपने छोटे भाई से पूछा कि आखिर इसका रहस्य किया है?

"भैया! राजा के मन में यह तीव्र अभिलाषा है कि वे अपने हास्य तथा चतुर उक्तियों द्वारा दूसरों को खुश करके बड़े हँसोड़ के रूप में स्वीकृति प्राप्त करे। मगर उनके पास जो भी व्यक्ति गया, उसने अपने हास्य के द्वारा राजा को प्रसन्न तो किया, परंतु राजा को अपनी चतुरोक्तियाँ सुनाने का मौक़ा नहीं दिया, यही उनकी चिंता का वास्तविक कारण है। इस कारण उन्हें हास्य सुनने के उपरांत और चिंता सताने लगी। मैंने यह बात ताड़ ली। उन्हें चमत्कारपूर्ण बातें करने का अच्छा मौक़ा दिया। इसका फल आप स्वयं देख रहे हैं।" छोटे भाई ने कहा।

रामशर्मा के तीसरे पुत्र को अपने अंतरंगी सलाहकार के रूप में नियुक्त करने के बाद राजा फिर कभी चिंतित दिखाई न दिये। शीघ्र ही छोटे भाई ने दरबार में अपना स्थान मजबूत कर लिया और अपने दोनों भाइयों को भी अच्छे पद दिलाये।

कपट मैत्री!

एक गाँव में रघु और हरि नामक दो दोस्त थे। एक बार रघु को किसी काम से चार दिनों के लिए गाँव से बाहर जाना पड़ा। इसलिए वह अपनी दुधारू गाय को हरि के घर हाँक ले गया और बोला–"हरि, मुझे चार दिनों के लिए अपने एक रिश्तेदार के घर जाना पड़ रहा है। मेहर्बानी करके ये चार दिन मेरी गाय की देखभाल करो! तुम्हारी इस मदद को में कभी भूल नहीं सकता।"

"अरे दोस्त! यह कौन बड़ी मुश्किल की बात है? मेरी गाय के साथ तुम्हारी गाय भी मवेशीखाने में रह जाएगी। चारे वगैरह का मैं इंतज़ाम करूँगा। तुम फ़िक्र मत करो।" हरि ने समझाया।

रघु निश्चित होकर चला गया।

इसके बाद हरि दोनों गायों के लिए चारा डाल कर अपने काम पर चला गया। रघु की गाय ने जल्दी-जल्दी तीन चौथाई घास चर डाली। हरि की गाय को भूखा रहना पड़ा।

शाम को जब हरि ने अपनी गाय को दुहने की कोशिश की तब उसने हरि को लात मार दी। मगर रघु की गाय ने दुगुना दूध दिया। इसे देखते ही हरि के मन में यह लोभ पैदा हो गया कि रघु की गाय को अपनी बना लेनी चाहिए।

उस दिन रात को हरि रघु की गाय को दो कोस की दूरी पर स्थित अपने एक रिश्तेदार के घर छोड़ आया। उसका विचार था कि थोड़े दिन बाद वापस ले आयेगा और यह कहेगा कि उसने यह गाय हाट में खरीद ली है।

रघु अपने रिश्तेदारों के यहाँ से लौटते ही सीधे हरि के घर पहुँचा और

रामदयाल पांडे

कृतज्ञता पूर्ण शब्दों में कहा–"हरि! मैं तुम्हारा उपकार भूल नहीं सकता। मेरी गाय की अच्छी रखवाली की है न?"

हरि ने चिंता प्रकट करते हुए कहा– "क्या बताऊँ, रघु? मेरे मुँह से बात नहीं निकल रही है। तुम्हारी गाय परसों तक अच्छी ही थी। उसे मैंने चारा दिया, पानी पिलाया। दूध दुहने गया तो लात मारने लगी। लेकिन कल सुबह उठकर देखता हूँ तो गाय गायब है! रात के वक़्त पगहा तोड़ कर भाग गई होगी!"

रघु ने ताड़ लिया कि हरि झूठ बोल रहा है। मगर प्रकट रूप में बोला– "हरि! हम क्या कर सकते हैं? तुम्हारा घर उसके लिए नया है। इसलिए शायद पगहा तोड़ कर भाग गयी होगी! अच्छी बात है। चिंता मत करो।"

अब रघु के सामने एक बड़ी समस्या उत्पन्न हो गई। उसे अपनी गाय को फिर से प्राप्त करनी है। मगर हरि को चोर ठहरा कर उसके दिल को दुखाना नहीं चाहिए। इसलिए रघु ने अपने एक होशियार मित्र की सलाह मांगी। उसने रघु को एक युक्ति बताई, रघु ने उस युक्ति को अमल किया।

इतवार के दिन की रात को दो नक़ाबधारी व्यक्तियों ने हरि के घर पहुँच कर दस्तक दिया। वे लोग रघु के मित्र के द्वारा तैनात व्यक्ति थे। आधी रात को नक़ाबधारियों को देख हरि डर गया।

"तैयार है? जल्दी दे दो! हमें शीघ्र चले जाना है!" नक़ाबधारियों ने हरि से कहा।

हरि ने निश्चय किया कि वे लोग चोर हैं, अपनी सांस रोके हरि ने अपने धन की गठरी लाकर उन आगंतुकों के सामने रख दी।

"हम यह नहीं चाहते हैं! गोबर की पेटी ले आओ।" नक़ाबधारियों ने डाँट कर कहा।

"गोबर की पेटी कैसी?" हरि ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"तुम नहीं जानते? रघु की गाय जो गोबर देती है, उसे एक पेटी में डाल कर दिन-भर रखोगे तो वह सोना बन जाता है। वही पेटी तुम लेते आओ।" नक़ाबधारियों ने कहा।

हरि ने झट उत्तर दिया—"भाइयो, इस वक़्त मेरे पास नहीं है। कल रात को मैं ज़रूर दूंगा।"

"तुमने अगर धोखा दिया तो खबरदार! तुम्हारा काम तमाम कर बैठेंगे, समझे!" यों चेतावनी दे नक़ाबधारी चले गये।

हरि ने सोचा, जान बची, लाखों पाये! फिर क्या था, उसने चट से किवाड़ बंद कर लिये।

इसके बाद हरि घर से निकल पड़ा। सवेरा होने के पहले ही अपने रिश्तेदारों के घर जाकर रघु की गाय को हांक ले

आया, पिछवाड़े के एक कमरे में बांध दिया। उसे चारा-पानी दिया और इस ख्याल से उसके सामने बैठा रहा कि न मालूम वह कब गोबर देगी। गाय के गोबर देते ही बड़ी होशियारी से हरि ने एक पेटी में डाल दिया और उसे बंद कर दिया।

उस दिन रात को दो नक़ाबधारियों ने हरि के घर पहुँच कर गोबर की पेटी ले ली। तब हरि ने उन लोगों से पूछा—"क्या रघु तुम्हें रोज इसी प्रकार देता है?"

"नहीं, हर इतवार को जरूर देता है!" यों कहकर वे दोनों पेटी लेकर चले गये।

हरि यह सोचकर फूला न समाया कि रघु की गाय के गोबर से उसकी क़िस्मत खुल जाएगी।

लेकिन हुआ क्या! दूसरे दिन सवेरे रघु हरि के घर आ धमका। गपशप करते बैठा ही रह गया। हरि का ख्याल था कि रघु के चले जाते ही गाय को चार-पानी देगा। मगर रघु के चले जाने के लक्षण दिखाई नहीं दिये।

गाय के चारे का वक़्त बीतता जा रहा था, इसलिए गाय रंभा उठी। रघु झट से उठ खड़ा हुआ और चिल्ला उठा—"हरि, लो, देखो, मेरी गाय लौट आई है।" यों कहते रघु घर से बाहर चला आया।

यही अच्छा मौक़ा समझ कर हरि भीतर चला गया। पिछवाड़े के कमरे के किवाड़ खोल कर रघु की गाय को हांक दिया। गाय को देखते ही रघु चिल्ला उठा—"हरि, यह मेरी ही गाय है!"

हरि मुस्कुराने का अभिनय करते बोला—"सोने जैसी गाय लौट आई है। तुम बड़े ही भाग्यवान हो!" हरि के मन में इस बात का दुख जरूर था कि गाय उसके हाथ से निकल गई है, पर उसे इस बात की बड़ी खुशी भी थी कि चोरी का इलज़ाम उसपर लगाया नहीं गया है।
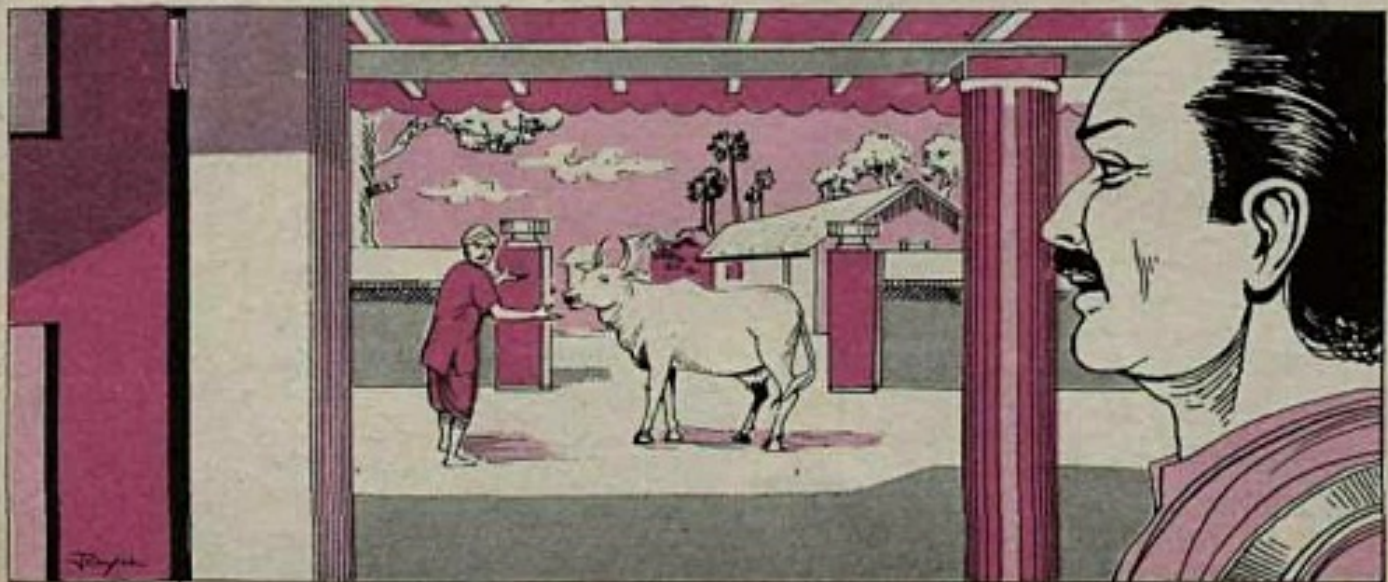
अनोखा सपना

तुर्किस्तान में एक घोर दरिद्र था। वह ऐसा दरिद्र था कि लोगों का चेहरा देखने तक उस की हिम्मत न पड़ती थी। मगर उसके मन में वे सभी इच्छाएँ थीं जो प्रायः धनियों के मन में रहा करती हैं। वह उन्हीं इच्छाओं के सपने देखा करता था।

एक दिन वह चाय की दूकान के एक कोने में बैठा हुआ था। तब उस के मन में यह कामना हुई कि हम्माम में जावे तो क्या ही अच्छा होगा।

वह सीधे हम्माम में चला गया। अपने कपड़े उतारे। उसे लगा कि हम्माम में उसके साथ एक और व्यक्ति भी है। हम्माम के नौकर क्षण-क्षण भर उस व्यक्ति को शरबत आदि पेय लाकर दे रहे हैं और हर तरह से उसकी सेवा कर रहे हैं।

दरिद्र ने हम्माम के भीतर झांक कर देखा। उसे लगा कि भीतर का व्यक्ति हर प्रकार से उसी के जैसा है। उसके मन में यह इच्छा पैदा हुई कि उस व्यक्ति के स्थान को उसे ग्रहण करना है। जब वहाँ पर नौकर न थे, तब मौक़ा पाकर दरिद्र हम्माम के अन्दर चला गया। उसने उस व्यक्ति के धारण किये हुए तौलिये को खींच लिया और उस व्यक्ति को पानी के हौदे में ढकेल दिया। तौलिये को कमर से लपेट कर उस व्यक्ति की जगह जाकर बैठ गया।

इस बीच नौकर सब लौट आये। सब प्रकार के रस्मों के साथ दरिद्र को नौकरों ने नहलाया। बढ़िया किस्म की शाल ओढ़ा कर बाहर ले आये। बाहर एक कमरे में धनी के सेवक तरह-तरह की पोशाकें लेकर तैयार खड़े थे। उन लोगों ने आगे बढ़ कर दरिद्र को वस्त्र पहनाये। दीनारों

राजेशकुमार बंसल

की भारी थैली उसके हाथ थमा दी। दरिद्र ने पोशाक पहनना समाप्त करके थैली में से तीन दीनार निकाले। हम्माम के तीनों नौकरों को एक-एक दीनार पुरस्कार में दिया। तब हम्माम के लोग सादर उसके साथ बाहर आ गये।

हम्माम के बाहर दरिद्र के वास्ते उत्तम नस्ल का एक घोड़ा तैयार खड़ा था। नौकरों ने उस को घोड़े पर चढ़ने को कहा। दरिद्र के शरीर में कंपकंपी होने लगी। यदि वह यह कहे कि वह घोड़े पर सवार न होगा तो उस की पोल खुल जाएगी, इस ख्याल से वह घोड़े पर सवार हुआ और घोड़े की इच्छा के अनुसार उसे आगे बढ़ने दिया।

घोड़ा जाकर एक सुंदर महल के सामने रुका। नौकरों ने दौड़ कर किवाड़ खोल दिये। उनकी मदद से दरिद्र घोड़े पर से उतर पड़ा। भीतर जाकर चकित हो चारों तरफ़ देखता रहा।

"सरकार! आप अपने कमरे में जायेंगे या अंत:पुर में?" नौकरों ने दरिद्र से पूछा।

"मैं अपने ही कमरे में जाऊँगा।" दरिद्र ने उत्तर दिया।

थोड़ी देर बाद फिर नौकरों ने आकर पूछा—"जनाब! आप खाना अपने कमरे में खायेंगे या अंत:पुर में?"

"यहीं पर ले आओ।" दरिद्र ने हुक्म दिया।

खाने के बाद एक नौकर ने आकर पूछा–"हुज़ूर! काफ़ी वक़्त बीत गया है। क्या आप अंत:पुर में जायेंगे!"

"हाँ, मैं अभी जाता हूँ।" दरिद्र ने कहा। नौकर सलाम करके चला गया।

मगर दरिद्र को मालूम न था कि उसे किस ओर जाना है। उस की घबराहट बढ़ने लगी। उस ने कई कमरों के किवाड़ खोल कर देखे, आखिर उसने जिस कमरे के किवाड़ खोले, उसमें औरतें दिखाई दीं।

उस महल की मालिकिन बड़ी खूबसूरत थी। दरिद्र को आते देख वह उठ कर सामने आ गई। उसे देखते ही दरिद्र का चेहरा पीला पड़ गया। वही युवती दरिद्र को अपने साथ ले गई, अपने निकट बिठला कर बातचीत करने लगी। भय के मारे दरिद्र का कलेजा कांप उठा। उसका दिल धड़कने लगा।

"सुनिये तो! परसों जब मेरी एक सहेली हमारे घर आई थी तब उसने आपका नाम बताने का हठ किया। आप यक़ीन कीजिए कि लाख कोशिश करने पर भी मुझे आप का नाम याद नहीं आया। अब भी मुझे आप का नाम याद नहीं आ रहा है। बताइए तो।" घर की मालकिन ने अनुरोध किया।

दरिद्र के सामने बड़ी उलझन पैदा हो गई। "हमने इतने दिन गृहस्थी चलाई, ऐसी हालत में मेरा नाम कैसे भूल गई?" दरिद्र ने उल्टा सवाल किया।

मालकिन ने हठ किया कि दरिद्र को अपना नाम बताना ही होगा। उसने बे सब नाम बताये जो उसके दिमाग में आये। आखिर यह पता चला कि वह झूठ बोल रहा है। उस हालत में उसे अपने धोखे देने की बात प्रकट करनी पड़ी।

"मुझे माफ़ कीजिए।" दरिद्र ने अनेक प्रकार से मिन्नत की।

"अच्छी बात है। मैं तुम्हें माफ़ करता हूँ। लेकिन मेरे खाविंद नवाब के प्रधान कथाकार हैं। उनके वास्ते जब भी बुलावा आ सकता है, तब क्या करोगे?" मालकिन ने पूछा।

उस औरत की बात पूरी न हो पायी थी कि नवाब के यहाँ से बुलवा आया।

दरिद्र डर के मारे कांपते हुए उस औरत की ओर देख कर बोला–"अब मुझे क्या करना होगा? आप ही बताइए।"

युवती ने यों बताया–"नवाब के सामने दो आसन होते हैं। उनमें एक पर मोतियों का हार पड़ा रहता है। दूसरे आसन पर सोने का हार होगा। तुम मोतियों का हार कंठ में पहन कर, सोने का हार हाथ में ले लो, तब नवाब को 'दोस्त!' संबोधित कर तुम्हें कहानी सुनानी होगी।"

इसके बाद नवाब ने जो सवारी भेजी थी, उसमें बैठ कर दरिद्र राजमहल में गया। राजमहल को देखते ही दरिद्र पसीने से तर हो गया। जब वह नवाब के सामने पहुँचा, तब लाचार होकर उसने मोतियों का हार गले में डाल लिया, सोने का हार हाथ में लेकर नवाब को पुकारा–"दोस्त!"

इतने में दरिद्र की आँखें खुलीं। उसने समझ लिया कि जो कुछ बीता है, वह एक सपना है। वह चाय की दूकान के एक कोने में ही बैठा हुआ था। उसने अपने फटे-पुराने व चीथड़े देख जो खुशी पाई, उसका बयान नहीं किया जा सकता।

रावण के कठोर शब्द सुनकर सीताजी भय के मारे कांप उठीं। हाथ में एक तिनका ले रुआए स्वर में तिनके से बोली—"तुम मेरे बारे में बिलकुल न सोचो। पापी के लिए स्वर्ग जैसे दुर्लभ है, उसी प्रकार तुम्हारे लिए में दुर्लभ हूँ। मैं उच्च वंश में उत्पन्न पुण्यात्मा हूँ। पतिव्रता हूँ। पराये पुरुष की पत्नी हूँ। तुम जैसे अपनी पत्नियों से अच्छे आचरण की कामना करते हो, वैसे ही अन्यों की पत्नियों के संबंध में भी मानो। तुम्हें हित की बातें समझाने वाला व्यक्ति कोई नहीं है, इसीलिए तुम इस प्रकार अनुचित काम करने पर तुले हुए हो! अथवा तुम्हारे विनाश का समय निकट आया है, इस कारण बुद्धिमान लोगों की बातों की अवहेलना करते हो! तुम्हारी वजह से शीघ्र ही इस लंका नगर का सर्वनाश होगा। तब सारी प्रजा प्रसन्न हो उठेगी। तुम यदि अपना भला चाहते हो तो श्रीरामचन्द्रजी के साथ मैत्री करो। वे उदार स्वभाव के हैं, अतः तुम्हारे अपराधों को क्षमा करके तुम्हें छोड़ देंगे। मैं भी तुम्हारे पक्ष में समझा दूँगी। इसलिए तुम पवित्र हृदय से मुझे रामचन्द्रजी के हाथों में पुनः सौंप दो। वरना तुम को श्रीरामचन्द्रजी तथा लक्ष्मण बड़ी सरलता के साथ मार डालेंगे।"

ये बातें सुन रावण क्रोध से भर उठा वह हुंकार भरते बोला—"सीते! तुमने जो जो बातें कहीं, उनमें से प्रत्येक बात

१३. त्रिजटा के सपने

के लिए मैं तुम्हारा वध कर सकता हूँ। मगर तुम्हारे प्रति मेरे मन में जो मोह भरा हुआ है, वही मुझपर नियंत्रण कर रहा है। मैंने तुम्हारे लिए जो अवधि दी है, उसके पूरे होने में अभी दो मास शेष हैं। इसके बाद तुम मेरी पत्नी बन जाओगी। उस वक़्त भी तुम न मानोगी तो तुम्हारा वध करके तुम्हारा मांस पकवा कर खा जाऊँगा।"

रावण के मुँह से ये कठोर शब्द सुन कर सीताजी के साथ रहनेवाली राक्षस नारियाँ भी दुखी हुईं और अपनी शीतल दृष्टि द्वारा उन सब नारियों ने सीताजी के प्रति सहानुभूति प्रकट की।

रावण ने राक्षस नारियों को आदेश दिया–"तुम लोग सीता के मन को मेरी ओर बदलने का प्रयत्न करो। साम, दाम, भेद व दण्डोपायों का प्रयोग करो।"

इस पर रावण की सब से छोटी पत्नी धान्यमालिनी ने रावण का आलिंगन करके कहा–"तुम्हारे लिए मैं तो हूँ! तुम राक्षस राजा के लिए यह मानव नारी ही क्यों? जो नारी तुम्हें नहीं चाहती, उसे चाहने से तुम्हारा क्या प्रयोजन सिद्ध होगा? तुम्हारे लिए प्राण तक देनेवाली मैं जो हूँ।"

रावण धान्यमालिनी की बातों पर मंदहास करते हुए उसे छुड़ाकर अपने महल को लौट चला। उसके जाते ही राक्षस नारियाँ सीताजी को घेरकर उसकी निंदा करने लगीं। उनमें एकजटा, हरिजटा, प्रघसा, विकटा तथा दुर्मुखी नामक नारियाँ थीं। सबने विस्तार पूर्वक बताया कि रावण कैसा महान है, उसकी पत्नी बनना कैसी भाग्य की बात है, और उसका तिरस्कार करना कैसी मूर्खता पूर्ण बात है।

इस पर सीताजी ने उन नारियों से कहा–"क्या तुम नहीं जानतीं कि ऐसी बातें कहना पाप पूर्ण है? तुम सब मिल

कर भले ही मुझे नोच-नोचकर खा जाय, मुझे स्वीकार है, परंतु रावण की पत्नी बनना असंभव है।"

इस पर राक्षस नारियाँ सीताजी को डराने लगीं।. उनकी बातें पेड़ पर बैठा हनुमान सुन रहा था। थोड़ी देर बाद सीताजी राक्षस नारियों के समेत आकर उस शिंशुपा नामक वृक्ष के नीचे बैठ गई जिस पर हनुमान बैठा था।

विनता नामक राक्षस नारी ने सीताजी से कहा–"बहन, तुम बड़ी ही गुणवती हो। पतिव्रता भी हो। यह तो प्रशंसनीय है। मगर सब बातों की अपनी एक सीमा होती है। रावण रूपवान तथा पराक्रमी भी है। राक्षसों का राजा भी है। उसकी पत्नी बनकर तुम खूब अपने को अलंकार करो, सुख भोगो। रामचन्द्रजी दुख भोगनेवाला प्राणी है। रावण के साथ शत्रुता मोलकर वह जीवित नहीं रह सकता। इसलिए तुम उसकी आशा छोड़ दो।"

"हम सब तुम्हारी भलाई के लिए कह रही हैं, हमारी बातें तुम क्यों नहीं सुनतीं? क्या तुम यह समझती हो कि तुम्हारा यह यौवन शाश्वत है? तुम को मारकर हम खा डालेंगी?" राक्षस नारियों ने धमकी भरे स्वर में समझाया।

"पहले हम सीताजी को मार डालेंगी। तब रावण से कह देंगी कि सीता मर गई है। तब रावण कहेगा कि ऐसी बात हो तो उसको खा डालो। सीता का मांस बराबर बाँट दो, वरना हमें आपस में लड़ना-झगड़ना पड़ेगा।" राक्षस नारियों ने परस्पर यों चर्चा की। राक्षस नारियों की बातें सुनकर सीताजी अमित दुखी हुईं। वह राम-लक्ष्मण, कौसल्या तथा सुमित्रा का स्मरण कर रो पड़ीं। इस बात पर उन्होंने चिंता प्रकट की कि उसकी मृत्यु निकट क्यों नहीं आई है!

तब तक लेटी रहनेवाली त्रिजटा नामक बूढ़ी राक्षसी ने अन्य राक्षस नारियों से

कहा–"तुम सब सीता को क्यों कर खायेंगी? मुझको खा डालो। मैंने एक भयंकर सपना देखा है। उसके अनुसार राक्षसों का सर्वनाश होगा और रामचन्द्र की विजय होगी।"

"वह कैसा सपना है?" राक्षस नारियों ने एक स्वर में पूछा।

पूरब में सूर्योदय होनेवाला था। उस वक़्त त्रिजटा ने अपने सपने का वृत्तांत यों सुनाया–"रामचन्द्र सफ़ेद फूल मालाएँ तथा सफ़ेद वस्त्र धारणकर लक्ष्मण को साथ ले आकाश मार्ग में एक पालकी पर सवार हो लंका में आया। पालकी को एक हज़ार हंस ढ़ो लाये। सीता सफ़ेद वस्त्र धारणकर समुद्र मध्य में श्वेत पर्वत पर खड़ी हुई है। वह रामचन्द्र से जा मिली। इसके बाद मैंने देखा, रामचन्द्र लक्ष्मण के साथ पर्वत जैसे हाथी पर सवार हो लंका में घूम रहा है। थोड़ी देर बाद राम-लक्ष्मण हाथी पर लंका नगर के ऊपर दिखाई दिये। अंत में रामचन्द्र सीता तथा लक्ष्मण समेत पुष्पक विमान पर उत्तरी दिशा में जाते हुए दिखाई दिये। रावण कनेर के फूलों की माला पहनकर, सारे बदन में तेल मलकर, तेल पीते हुए ऊपर चढ़कर नीचे गिरते दिखाई पड़ा। दूसरी बार रावण पुष्पक विमान से नीचे गिरते दिखाई पड़ा। उसका सिर गंजा था, वह काले वस्त्र धारण किये हुए था और कई औरतें उसको खींचकर ले जा रही हैं। रावण को गधे पर सवार हो दक्षिणी दिशा में बढ़ते हुए भी मैंने देखा। एक बार वह भयभीत हो गधे पर से औंधे मुंह गिरते दिखाई दिया। एक युवती लाल वस्त्र पहने सारे शरीर पर कीचड़ मलकर रावण के गले में फंदा डालकर दक्षिण की ओर खींच ले गई। कुंभकर्ण भी कुछ इसी प्रकार दिखाई दिया। रावण के सभी पुत्र तेल से अभिषेक किये हुए दिखाई दिये। एक बार रावण सुअर पर, मेघनाद मगरमच्छ पर तथा कुंभकर्ण
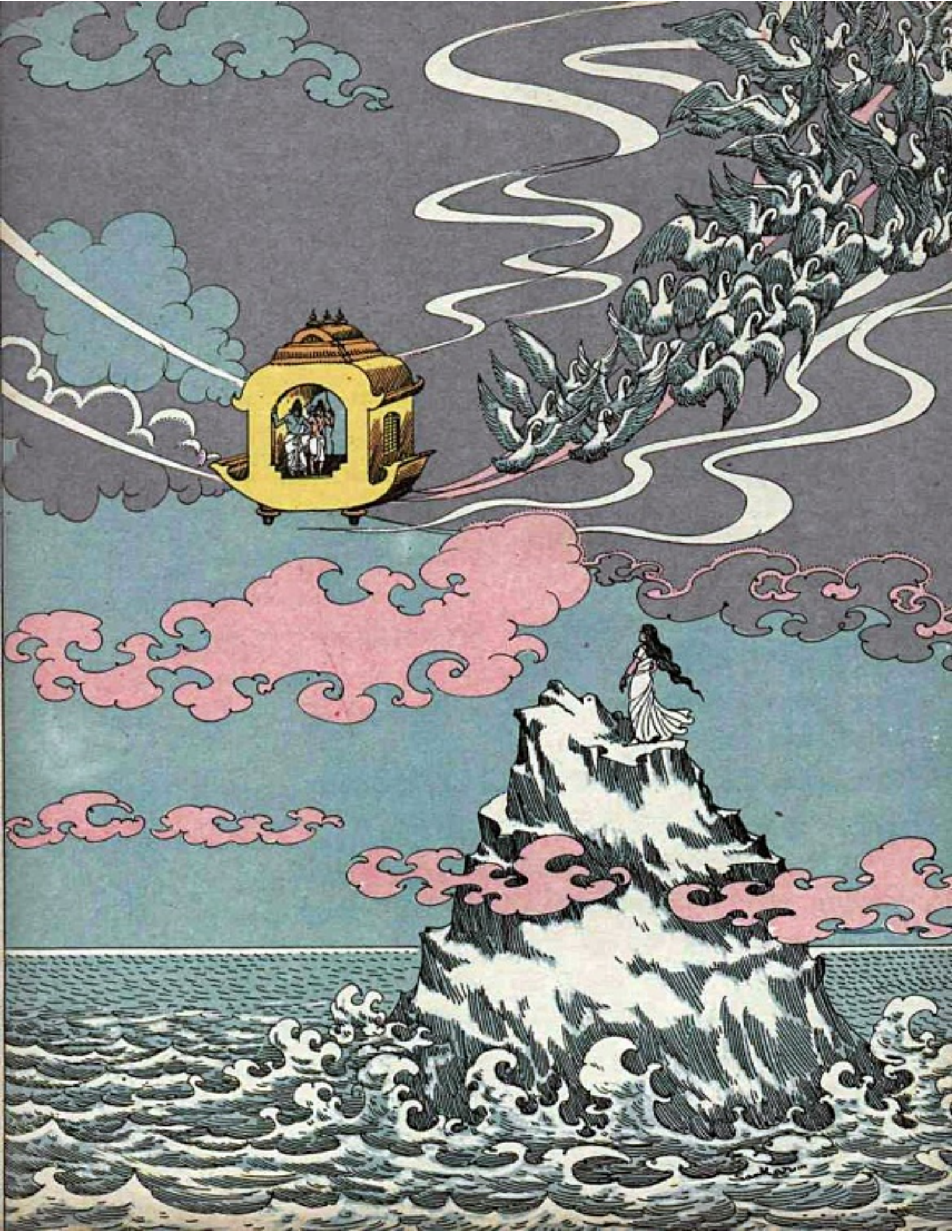
ऊँट पर सवार हो दक्षिणी दिशा में जाते हुए दिखाई पड़े। मगर विभीषण सफ़ेद फूलों की मालाएँ, सफ़ेद वस्त्र, शरीर पर सफ़ेद चन्दन मलकर अपने चार मंत्रियों के साथ चार दाँतोंवाले बड़े हाथी पर सवार हुए दिखाई दिये। लंका नगर टूटकर समुद्र में गिरते दिखाई दिया।"

इस प्रकार बड़ी देर तक त्रिजटा ने राक्षस नारियों को अपने सपने का समाचार सुनाकर अंत में कहा—"तुम लोग सीता से दूर हटकर रहो। यह समझ लो कि रामचन्द्र को सीता प्राप्त हो गई है। सीता से तुम्हें जो कुछ कहना है, शांति से कहो, अच्छी-अच्छी बातें बताओ! मैं समझती हूं कि हमें सीता से अभय माँगना सब दृष्टियों से उत्तम होगा।"

पेड़ पर बैठकर ये सारी बातें सुनते तथा सारी घटनाएँ देखते हुए हनुमान की समझ में न आया कि सीताजी को सांत्वना किस प्रकार दे? उनसे वार्तालाप किये बिना लौट जाना उचित नहीं है। पर साथ ही राक्षस नारियों में संदेह पैदा करके राक्षस वीरों के साथ युद्ध मोल लेना भी मूर्खता पूर्ण बात होगी। यह भी कहना संभव नहीं है कि युद्ध में विजय ही हाथ लगेगी। यदि वह राक्षसों का वध करेगा भी तो पुनः समुद्र को पार करने की शक्ति वह खो सकता है। इस बात का भी उसे ध्यान रखना है कि सीताजी उसको माया रूप में स्थित राक्षस समझकर भयभीत न हो!

यों सोचकर हनुमान ने एक कहानी उच्च स्वर में इस प्रकार सुनाई जिससे सीताजी भी उसे सुन सके!

"दशरथ नामक एक महान राजा के रामचन्द्र नामक एक ज्येष्ट पुत्र हैं। रामचन्द्रजी अपने पिता के आदेश पर अपनी पत्नी तथा भाई को साथ ले वनवास को चले गये। जंगल में रामचन्द्र ने अनेक पराक्रमी राक्षसों का वध किया। यह

समाचार जानकर रावण माया मृग के द्वारा धोखा देकर सीताजी को हरण कर ले गया। रामचन्द्रजी अपनी पत्नी की खोज में जंगल व पहाड़ छानते गये, आखिर सुग्रीव नामक एक वानर के साथ उनकी मैत्री हुई। इस पर रामचन्द्रजी ने वाली नामक वानर राजा का वध करके सुग्रीव को वानर राज्य दिलाया। सुग्रीव के आदेश पर हज़ारों वानर सीता देवी की खोज में सभी दिशाओं में निकल पड़े। उनमें से मैं एक हूँ। मैं सौ योजन दूर का समुद्र पारकर यहाँ आया हूँ। रामचन्द्रजी ने सीताजी का जैसा वर्णन किया, वैसी ही सीताजी को मैंने देखा।"

यहाँ तक कहानी सुनाकर हनुमान मौन रहा। उसकी बातें सुन चकित हो सीताजी ने सिर उठाकर वृक्ष पर देखा। बड़ी देर तक देखने के बाद आखिर उन्हें हनुमान दिखाई दिया।

सफ़ेद वस्त्र धारण कर वृक्ष की शाखाओं के बीच विद्युत की भांति दिखाई देनेवाले हनुमान को देखते ही सीताजी को डर लगा। यह सोचकर वह दुखी हुई कि विपदा के समय दिखाई देनेवाला बंदर का रूप उसे दीख पड़ा है। यह सोचकर वह मौन रुदन करने लगीं कि उसके रुदन को कहीं राक्षस नारियाँ सुन न ले। फिर उन्होंने सोचा कि लंका नगर में रामचन्द्रजी की कथा सुनानेवालों का रहना असंभव है; इसलिए शायद वह सपना देख रही हैं। सपने में बंदर का दीखना अशुभ का लक्षण है। यह सोचकर डर गई कि कहीं रामचन्द्रजी विपदा में न फँसे हो! मगर जब वह जाग रही है तब वह सपना कैसे देख सकेगी! फिर सोचा कि वह सदा सर्वदा रामचन्द्रजी के बारे में ही सोचा करती है, इसीलिए रामचन्द्रजी की कथा सुनने का उसे भ्रम हो गया हो! फिर भी उसने जो कुछ सुना, वह सत्य हो, इस आशय से सीता ने इंद्र, बृहस्पति, ब्रह्मा तथा अग्निहोत्र को प्रणाम किया।
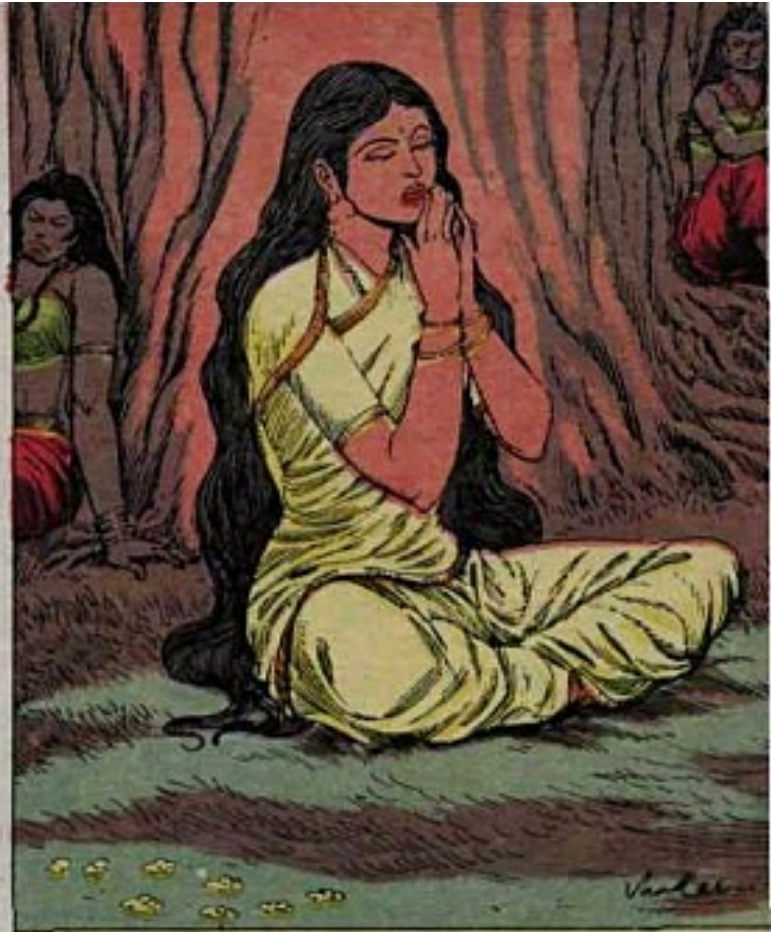
इस बीच हनुमान वृक्ष पर से नीचे कूद पड़ा। सीताजी के समीप जाकर हाथ जोड़कर प्रणाम किया, तब बोला– "माई, आप पतिव्रता जैसी दीख रही हैं, आप कौन हैं? क्यों रो रही हैं? आप को देखने पर लगता है कि आप किसी देवता गण से संबंधित नारी हैं। यदि आप रावण के द्वारा अपने स्थान से हरण कर लाई गई सीताजी ही हैं, तो शीघ्र बताइए। आप का शुभ होगा।"

इस पर सीताजी ने हनुमान से यों कहा–"मैं महाराजा दशरथ की पुत्र वधू हूँ। विदेह राजा जनक की पुत्री हूँ। मेरा नाम सीता है। श्री रामचन्द्रजी के घर में बारह वर्ष मैंने समस्त प्रकार के सुख भोगे हैं। तेरहवें वर्ष में जब श्री रामचन्द्रजी के पट्टाभिषेक की तैयारियाँ हो रही थीं, तब दशरथ की पत्नियों में से एक कैकेई ने यह हठ किया कि यदि श्री रामचन्द्रजी का पट्टाभिषेक होगा, तो वह अन्न-जल त्यागकर मृत्यु को प्राप्त होगी, यदि उसे जीवित देखना चाहे तो श्री रामचन्द्रजी को वनवास में भेजे। महाराजा दशरथ ने इसके पूर्व कैकेई को दो वर दिये थे, महाराजा ने अपने वचन का पालन करने के हेतु श्री रामचन्द्रजी को देनेवाला राज्य वापस ले लिया। रामचन्द्रजी ने अपने पिता के आदेश को हृदयपूर्वक स्वीकार किया, वल्कल पहनकर वनवास में जाते मुझको कौशल्या के यहाँ रहने को कहा। मैं रामचन्द्रजी को छोड़ स्वर्ग में भी नहीं रह सकती। इसलिए मैं उनसे भी पहले वनवास के लिए रवाना हो गई। इसी प्रकार सुमित्रा का पुत्र लक्ष्मण भी रामचन्द्रजी के साथ चल पड़ा। हम जब दण्डकारण्य में रह रहे थे, तब दुष्ट रावण मुझको हरण कर यहाँ पर ले आया। रावण मुझको और दो मास तक प्राणों के साथ जीवित रहने देगा, इसके बाद में मृत्यु को प्राप्त हो जाऊँगी।"

ये बातें सुन हनुमान चिंता में डूब गया। उसने सीताजी को यों सांत्वना दी :

बलिभिर्मुख माक्रांतम्
पलितै रंकितम् शिर:
गात्राणि शिथिलायंते
तृष्णैका तरुणायते ॥ १ ॥

[चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गई हैं, बाल पक गये हैं, अंग-अंग ढीले हो गये हैं, परंतु आशा यौवनावस्था में है ।]

भ्रांतम् देश मनेक दुर्गविषमम्
प्राप्तम् न किंचित्फलम्
त्यकत्वा जातिकुलाभिमान मुचितम्
सेवा कृता निष्फला
भुक्तम् मानविवर्जितम् परगृहे
ष्वाशंकया काकवत्
तृष्णे! जृंभसि पापकर्मपिशुने
नाद्यापि संतुष्यसि ॥ २ ॥

[दुर्गम प्रदेशों का भ्रमण किया, पर थोड़ा भी फ़ायदा न रहा । अपनी जाति, कुल, वंश की प्रतिष्ठा तक को त्याग कर नौकरी की, लेकिन व्यर्थ हो गया । लज्जा त्याग कर कौए की भांति दूसरों के घरों में खाना खाया, फिर भी पाप पूर्ण हे आशे! तुम बढ़ती ही जाती हो, क्षय नहीं होती हो!]

Photo by Devidas Kasbekar

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

एक रंग दो रूप!

प्रेषक
भूषण प्रसाद देवांगन

वार्ड नं. ५, बापू मार्ग,
चांपा पो. म. प्र.

छाँव हो या धूप!!

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ फरवरी १० तक प्राप्त होनी चाहिए । सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें ।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अक्तूबर के अंक में प्रकाशित की जायेंगी !

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

दूसरा आवरण पृष्ठ:
धनिकों का पेय

तीसरा आवरण पृष्ठ:
दरिद्रों की प्यास

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3. Arcot Road, Madras-600026. Controlling Editor: NAGI REDDI

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

सिर्फ़ रूबी डस्ट चाय में ही आप पाते हैं तीनों खूबियाँ

१. चटपट लिकर २. मज़ेदार खुशबू ३. हर पैकेट से और ज़्यादा कप चाय
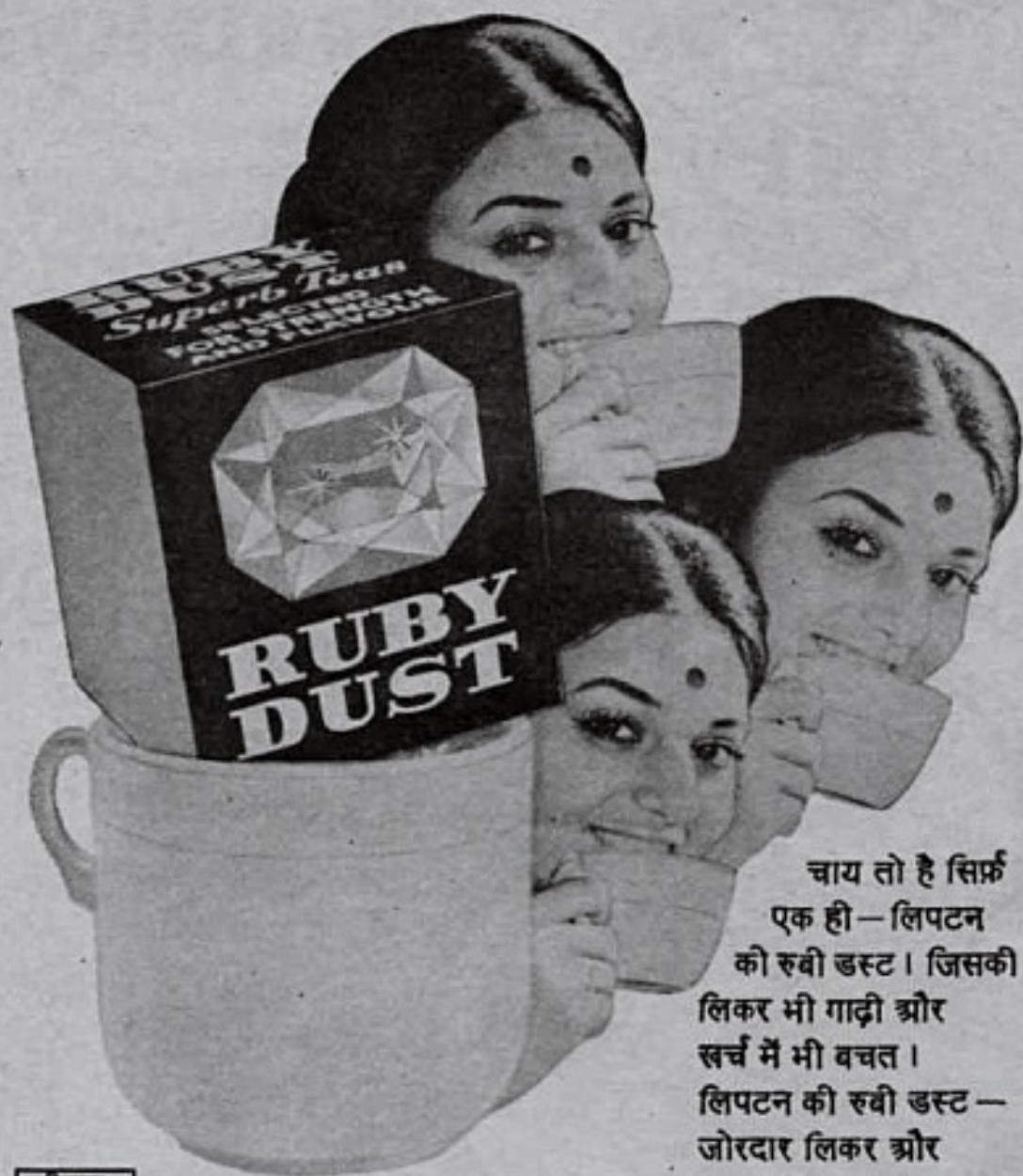
LIPTON
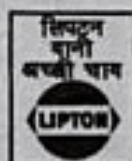
लिपटन की रूबी डस्ट हर पैकेट से पायेंगे मज़ेदार और ज़्यादा कप चाय

LRDC-10 HIN

NP
ये लीजिये
आपको लुभानेवाले
क्रॅकीज़
सांता क्लॉस की ही तरह एन. पी. भी बच्चोंके लिए स्वादिष्ट मिठाइयोंका खजाना लुटाने लाते हैं। एन. पी. क्रॅकीज़ च्युइंग गम—बबल गम भी—जो पेपरमिंट, पाइनएपल, टूटी फ्रूटी, ऑरेंज और अनोखे, सुपारीके स्वादयुक्त होते हैं।
इसके अलावा बॉनबाइट—जो मलाईदार और अप्रतिम स्वादिष्ट मिठाई है, और फलोंके रुचिकर स्वादवाले बालगम्स।
आपकी रुचि-पसंद च्युइंग गम
NP — ISI गुणवत्ता के निशानवाले अद्वितीय च्युइंग गम्स और बबल गम्स।
अपनी जेबोंमें हमेशा NP – आपकी पसंद की च्युइंग गम्स रखिए।
CRACKIES
bonbite
NP
दि नॅशनल प्रॉडक्टस
बंगलूर
Dattaram-NP-1 HINDI

Photo by: **N. PAKKIRISAMY**

INADEQUATE DRINK

CHANDAMAMA (Hindi) NOVEMBER 1975 Regd. No. M. 5452

मित्र-भेद